'हिन्दी कहानियाँ'

एक अनुशीलन

(डा० श्रीकृष्ण लाल द्वारा संग्रहीत 'हिन्दी कहानियों' की
विशद आलोचना)

लेखक—
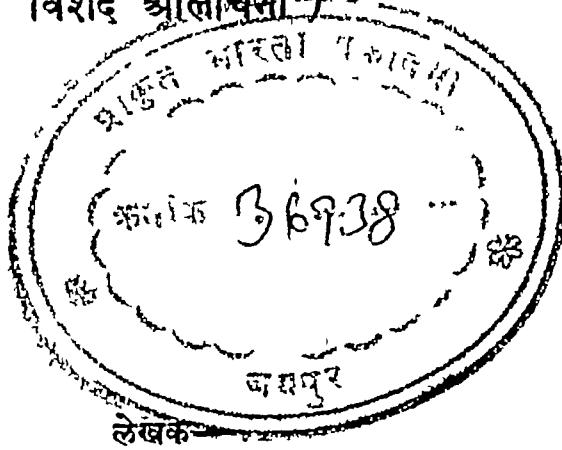
'प्रज्ञाचक्षु'

एजुकेशनल बुक सिन्डिकेट

सी. २ चेतगंज, बनारस।

मूल्य १॥)

कहानी क्या है ?
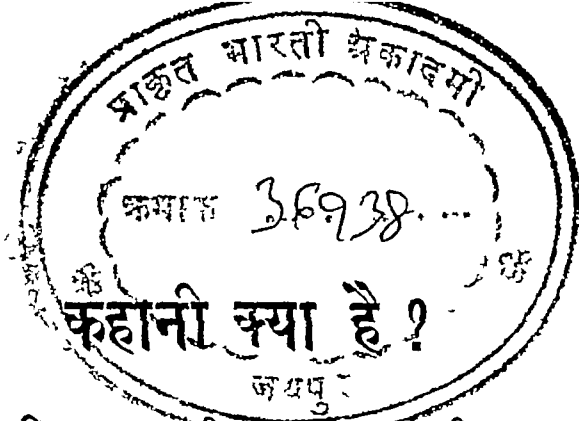
हिन्दी के ख्यातिलब्ध कहानीकार—श्री भगवती प्रसाद वाजपेयी ने एक स्थान पर लिखा है कि 'कहानी की सर्वसम्मत परिभाषा लिखना दुष्कर है। यों तो साधारण रूप से यह समस्त जगत ही भिन्न रुचियों से निर्मित हुआ है; किन्तु जीवन की आधारभूत वृत्तियों में इतनी रुचि-भिन्नता प्रायः कम ही देखने को मिलती है जितनी कला के क्षेत्र में।'*

कहानी को किसी परिभाषा में समेटना बड़ा दुस्तर कार्य है। परिभाषा का निर्माण विशेषताओं और आकार स्वरूपों की निश्चित उपलब्धि से ही सम्भव है। कहानी-कला अभी तरुणाई पर है। उसकी प्रौढ़ता अभी दूर है। प्रतिभा का मार्ग लीक पर बनी सड़क नहीं होता। वह तो परिभाषा का पिछड़ापन सिद्ध करके नया रूप दान देने में ही कृतकार्य होती है। वस्तुतः कहानी के लक्ष्य, उद्देश्य या प्रयोजन में सभ्यता और संस्कृति के अनुरूप विकास होता गया है। किसी भी देश या भाषा की 'कहानी' की कहानी बतलाती है कि उसकी विकास की परम्परा मानव-मन के विकास की प्रतिच्छाया है। पहले वह मनुष्य की सहज जिज्ञासा की तृप्ति के लिए लिखी गई, फिर उसको ज्ञान देने के लिए—फिर वह केवल चमत्कार या कौतूहल के प्रयोजन से लिखी गई। फिर वह घटनाओं में किसी अज्ञेय शक्ति की लीला दिखाने के लिए लिखी जाने लगी। और अब मानव मन के किसी जटिल गुत्थी को सुलझाने के लिए लिखी जाती है। और वस्तुतः अत्याधुनिक कहानी इस उद्देश्य को भी अपूर्ण मानकर उससे आगे बढ़ गई है।

---

* प्रतिनिधि कहानियाँ।

अतएव इस समय कोई कड़ी सीमाएं कहानी को घेरने के लिए नहीं खींची जा सकती। नीचे कहानी के सम्बन्ध में कुछ देशी-विदेशी कहानीकारों और आलोचकों के मत दिए जाते हैं। इन उद्धरणों के आलोक में कहानी के स्वरूप और उसकी परिभाषा को पहचानना सरल होगा।

(१)

कहानी एक रचना है जिसमें जीवन के किसी एक अङ्ग या किसी एक मनोभाव को प्रदर्शित करना ही लेखक का उद्देश्य रहता है।... वह ऐसा रमणीय उद्यान नहीं जिसमें भाँति भाँति के फूल बेल-बूटे सजे हुए हैं, बल्कि एक गमला है जिसमें एक ही पौधे का माधुर्य अपने समुन्नत रूप में दृष्टिगोचर होता है। —प्रेमचन्द

(२)

आख्यायिका में सौन्दर्य की एक झलक का रस है। मान लीजिए आप किसी तेज सवारी पर चले जा रहे हैं, रास्ते में एक गोल-मटोल शिशु खेल रहा है, सुन्दरता की मूर्ति। उसकी झलक मिलते न मिलते भर में सवारी आगे निकल जाती है किन्तु उतनी ही झलक उतनी होती है कि उसकी स्थायी रेखा आपके अन्तर्पट पर अङ्कित हो जाती है, यही काम कहानी भी करती है।

—जयशङ्कर 'प्रसाद'

(३)

कहानी तो एक भूख है जो निरन्तर समाधान पाने की कोशिश करती रहती है। हमारे अपने सवाल होते हैं, शङ्कायें होती हैं, चिन्तायें होती हैं और हमीं उनका उत्तर, उनका समाधान खोजने का, पाने का सतत प्रयत्न करते रहते हैं। हमारे प्रयोग होते रहते हैं। उदाहरणों और मिसालों की खोज होती रहती है। कहानी उस खोज के प्रयत्न का

एक उदाहरण है। वह एक निश्चित उत्तर तो नहीं दे देती, पर यह अलबत्ता कहती है कि शायद उस रास्ते मिले। वह सूचक होती है, कुछ सुझा देती है और पाठक अपनी चिन्तन-क्रिया के सहारे उस सूझ को ले लेते हैं।

—जैनेन्द्र कुमार

(४)

कहानी जीवन की प्रतिच्छाया है और जीवन स्वय एक अधूरी कहानी है, एक शिला है जो उम्र भर मिलती है और समाप्त नहीं होती।

—'अज्ञेय'

(५)

घटनात्मक इकहरे चित्रण का नाम कहानी है। साहित्य के सभी अङ्गों के समान रस इसका आवश्यक गुण है।

—चन्द्रगुप्त विद्यालङ्कार

(६)

कहानी जीवन रहस्य की अभिव्यञ्जना है। रहस्य व्यक्ति के मानस में निवास करते हैं और उनका उद्‌घाटन घटनाओं द्वारा होता है। व्यक्ति समाज का अंग होता है। इस प्रकार प्रत्येक कहानी प्रकारान्तर से समाज की ही कहानी हुआ करती है।

—भगवतीप्रसाद वाजपेयी

(७)

आख्यायिका चाहे किसी लक्ष्य को सामने रखकर लिखी गई हो वा लक्ष्य विहीन हो, मनोरंजन के साथ साथ अवश्य किसी न किसी सत्य का उद्‌घाटन करती है।

—राय कृष्णदास

(८)

आधुनिक कहानियों का ध्येय है मनुष्य के मनोरहस्यों का उद्घाटन करना, उनमें अनियन्त्रित और अप्रासंगिक भावुकता के प्रदर्शन का अवकाश नहीं। वही कहानियाँ सफल समझी जाती हैं जिनमें कहानी लेखक निर्लिप्त भाव से एक ऐसी दुनिया की सृष्टि कर दे जो वास्तविक जगत से परे न हो।

—विनोदशङ्कर व्यास

(९)

जीवन का चक्र नाना परिस्थितियों के संघर्ष से उलटा-सीधा चलता रहता है। इस सुवृहत चक्र के किसी विशेष परिस्थिति की स्वाभाविक गति का प्रदर्शन ही कहानी होती है।

—इलाचन्द्र जोशी

(१०)

'कहानी' साहित्य की वह विधा है जो काल्पनिक आख्यान के माध्यम से स्थूल अथवा सूक्ष्म भावात्मक प्रभाव की एकांगिता का अनुसंधान करती हुई अपनी एकाग्र दृष्टि से जीवन का एक खण्ड चित्र, झलक या झाँकी देती है।

—डा० सुधीन्द्र

(११)

कहानी तो एक छोटी सी साहित्य-वस्तु है। उसमें कथा का भारीपन और साहित्यिक बोझ नहीं होता।...अनुभूति की तीव्रता होती है पर अनेकरूपता नहीं होती। रस का गहरा अकेलापन होता है परन्तु रसान्तर नहीं होता और न अपने अनेकार्थी स्वरूप और भावनाएं होती हैं। एक तत्त्व, एक सम्वेदना, एकार्थी प्रेरणा, एक प्रयोजन, एक स्वरूप तथा एक प्रकार की सर्वत्र मनोहरता कहानी की विशेषता है।

—सद्गुरुशरण अवस्थी

(१२)

आख्यायिका एक निश्चित लक्ष्य या प्रभाव को लेकर नाटकीय अख्यान है ।

—श्यामसुन्दर दास

(१३)

हमारी कहानी का जन्म उस समय होता है जब संसार के स्त्री पुरुष परस्पर एक दूसरे के विषय में सोचने लगते हैं, अथवा मानव-सृष्टि अमानव-सृष्टि से सम्बन्ध जोड़ती है । ऐसी दशा में यह आवश्यक नहीं है कि इसका परिणाम उपदेश ही हो । मानव तथा अ-मानव जाति के विषय में कुछ रोचक बातों का स्पष्टीकरण पारस्परिक रूप में कर देना ही कहानी के अस्तित्व का उदाहरण है ।

—डा० रामकुमार वर्मा

(१४)

कहानी घटना या चरित्र का संक्षिप्त रस-युक्त चित्रण है ।

—ललिता प्रसाद सुकुल

(१५)

कहानी का लक्ष्य घटना चक्र होता है, उसमें आकर्षण का विधान आवश्यक होता है । फलतः कहानी में पाठक की कुतूहल वृत्ति जागरित की जाती है । इसी से अँगरेजी समीक्षक कहानी का प्रधान तत्व 'कुतूहल' (एलीमेण्ट आफ सस्पेंस) को ही मानते हैं ।

—पं० विश्वनाथप्रसाद मिश्र

(१)

A short story is narrative short enough to be read in a single sitting, written to make an expression, on the reader, excluding all that

(६)

does not forward that impression, complete and final in itself.

—Adgar Allan Poe

(२)

A short story shoned by a story, a record of things full of incident and accident, swift movement unexpected development leading through suspense to a climax and a satisfying denouncement.

—Sir Hugh Walpole.

(३)

Short story is a representation, in a brief, dramatic form, of a turning point in the life or a single character.

—James W. Linn

(४)

The modern short story is a conscious literary effort. It is a cleverly planned artistic achievement.

—R. K. Lagu.

(५)

A short story deals with a single character or a series of emotions called forth by a single situation. The story must be an organic whole.

—Brander Matthews.

(६)

It may be horrible or pathetic or funny or beautiful or profoundly illuminating, having only this essential that it should take from fifteen to fifty minutes to read aloud.

—H. G. Wells.

(७)

It (short story) is a series of crisis, relative to other and bringing about a climax.

—John Foster

(८)

A story is like a horse-race. It is start and finish that count much.

—Mr. Ellery Sedgewich.

(९)

The short story is not a transcript of life but a simplification of some side of life.

—Stevenson.

(१०)

The novel is a satisfaction, the short story is a stimulus.

—Barry Bain.

हिन्दी कहानी का विकास

हिन्दी में कथा-साहित्य का विकास 'दो सौ बावन वैष्णवों की वार्त्ता' अथवा 'चौरासी वैष्णवों की वार्त्ता' से आरम्भ होता है। गोकुल नाथ की यह गद्य-रचना कथा का आरम्भिक रूप प्रस्तुत करती है। जटमल की 'गोराबादल की कथा' लल्लूलाल जी का 'प्रेमसागर', सदल मिश्र का 'नासिकेतोपाख्यान', इंशाअल्ला खाँ की 'रानी केतकी की कहानी' तथा शिवप्रसाद 'सितारे हिन्द' और भारतेन्दु बाबू हरिश्चद्र का 'राजा भोज का सपना' तथा 'एक अद्भुत और अपूर्व स्वप्न' वास्तव में हिन्दी-गद्य की आरम्भिक कथाएं हैं।

भारतेन्दु-युग में बल्कि उससे पूर्व ही हिन्दी कहानी-कला की उत्पत्ति की समस्त परिस्थितियाँ उपस्थित थी। 'कविवचन सुधा', 'हरिश्चन्द्र मैगजीन', 'हरिश्चन्द्र चन्द्रिका', 'हिन्दी प्रदीप', 'ब्राह्मण', 'क्षत्रिय पत्रिका' और 'भारतमित्र' आदि मासिक पत्रों और साप्ताहिकों में जहाँ एक ओर आधुनिक भाषा-शैली के विकास का प्रयत्न हो रहा था, वहाँ दूसरी ओर इन्ही प्रयत्नों के माध्यम से हिन्दी-गद्य के लघु-रूपों के जन्म हो रहे थे। इन लघु-रूपों में निबन्ध, व्यंग्यचित्र, स्फुट-चित्र, हास्य-चित्र आदि की गद्य-शैलियाँ उल्लेखनीय हैं। वास्तव में इन्हीं गद्य-शैलियों ले प्रेरणा-सूत्र में हिन्दी कहानी-कला के आविर्भाव का सम्बन्ध है।

परन्तु समूचे भारतेन्दु-युग में कहानी-कला की उत्पत्ति की दिशा में जितने भी प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष प्रयत्न हुए, उन समस्त प्रयत्नों और गद्य-शैलियों में हिन्दी कहानी-कला का कोई भी रूप नहीं बन सका।

निश्चित रूप से आधुनिक हिन्दी कहानी का प्रारम्भ 'सरस्वती' और 'सुदर्शन' के प्रकाशन से १९०० ई० में हुआ। 'सरस्वती' में शेक्सपीयर के अनेक नाटकों के अनुवाद कहानी-रूप में प्रकाशित हुए—१९०० ई० की जनवरी में 'सिम्बलीन', फरवरी में 'एथेन्सवासी टाइमन' (टाइमन ऑफ एथेन्स), मार्च तथा अप्रैल में 'पेरिक्लीज' और सितम्बर तथा अक्तूबर में 'कौतुकमय मिलन' (कामेडी ऑव एरर्स)। 'सुदर्शन' में भी पौराणिक आख्यान कहानी-रूप में प्रकाशित हो रहे थे। इन अनुवादित तथा रूपान्तरित रचनाओं में ही आधुनिक कहानियों का आरम्भिक रूप मिलता है।

जून १९०० में, 'सरस्वती' में हिन्दी की सर्वप्रथम आधुनिक कहानी, किशोरीलाल गोस्वामी की 'इन्दुमती' प्रकाशित हुई। यह पूर्णतया मौलिक कृति नहीं कही जा सकती क्योंकि इस पर 'टेम्पेस्ट' की इतिवृत्ति की छाया है। इसके बाद अन्य अनेक कहानियाँ अनुवादित, रूपान्तरित और मौलिक भी 'सरस्वती' और 'सुदर्शन' में निकलती रही। वृन्दावनलाल वर्मा ने सितम्बर १९०९ में 'राखीबन्द भाई' और अक्टूबर १९१० में 'तातार और एक वीर राजपूत' नामक कहानियाँ 'सरस्वती' में लिखीं और मैथिलीशरण गुप्त ने भी 'नकली क़िला' नामक एक कहानी दिसम्बर १९०९ में गीतिका छन्दो में लिखी जिसमें बूँदी के हाड़ा कुम्भ की अद्भुत वीरता और त्याग का वर्णन है।

सन् १९०० से १९१० तक आधुनिक हिन्दी कहानी का प्रयोगात्मक युग था जब कि कहानी की कोई निश्चित परम्परा न थी और उसके साहित्यिक रूप तथा शैली के सम्बन्ध में कोई निश्चित आदर्श सामने न था।

सन् १९११ में, काशी से 'इन्दु' का प्रकाशन आरम्भ हुआ और तब से कहानियों की एक अविच्छिन्न परम्परा चल निकली। १९११ में

जयशंकर 'प्रसाद' की सर्वप्रथम कहानी 'ग्राम' और हास्य-रस के लेखक श्री जी० पी० श्रीवास्तव की भी प्रथम कहानी 'इन्दु' में प्रकाशित हुई। उसी वर्ष 'भारतमित्र' में 'उसने कहा था,' कहानी के अमर लेखक चन्द्रधर शर्मा गुलेरी की कहानी 'सुखमय जीवन' भी प्रकाशित हुई। अस्तु, १९११ ने हिन्दी के तीन उच्चकोटि के कहानी-लेखक दिए, इसलिए आधुनिक हिन्दी कहानी का वास्तविक आरम्भ १९११ से ही समझना चाहिए।

हिन्दी कहानी-कला के प्रारम्भिक विकास की दृष्टि से 'इन्दु' द्वारा जयशङ्कर 'प्रसाद', 'सरस्वती' द्वारा चन्द्रधर शर्मा गुलेरी, 'हिन्दी-गल्प-माला' द्वारा इलाचन्द्र जोशी और उधर 'सप्त-सरोज' की भूमिका से प्रेमचन्द के अभ्युदय ने समष्टि रूप से एक नए युग-द्वार को खोला।

कहानी-कला की दिशा में यह विकास इतना व्यापक और विस्तृत था कि इसने अपने में एक स्वतंत्र युग की प्रतिष्ठा की। 'प्रसाद' और प्रेमचन्द इन दो महान् कथा-शिल्पियों से दो पृथक् और अनन्य कला-संस्थानों के निर्माण हुए जिनके अन्तर्गत हिन्दी के अनेक प्रतिष्ठित विकास-युगीन कहानीकारों ने अपनी बहुमूल्य कला-कृतियाँ दीं।

प्रेमचन्द मूलतः आदर्शोन्मुख यथार्थवादी परम्परा के प्रतीक थे, 'प्रसाद' भाव-मूलक परम्परा के अधिष्ठाता। 'प्रसाद' अपनी कहानियों में प्रेम, सौन्दर्य और रहस्य-भावना के कहानीकार हैं। कुछ विशुद्ध सामाजिक और यथार्थवादी कहानियों को छोड़कर शेष सब कहानियाँ प्रतीकात्मक और ऐतिहासिक कोटि में रखी जा सकती हैं। प्रतीकात्मक कहानियों का मूल धरातल कल्पना और भावुकता है अतएव ये कहानियाँ अपने कलागत स्वरूप में रेखाचित्र और गद्य-गीत के समीप चली जाती हैं।

'प्रसाद' की कहानियों में कल्पना का प्रचुर माधुर्य है। अन्तर्द्वन्द भी है किन्तु उसे वर्णन करने का प्रयत्न अधिक है। कवित्व-पूर्ण वातावरण और नाटकीय परिस्थितियों की सृष्टि करने में 'प्रसाद' जी अद्वितीय हैं।

प्रेमचन्द यथार्थवादी परम्परा के कर्णधार हैं; अतएव इनकी कहानी-कला में वे समस्त शिल्पगत प्रवृत्तियाँ विद्यमान हैं, जो वस्तुतः कहानी-कला की आधार-शिलाएँ हैं। उन्होंने कहानी-विधान के मर्यादित क्षेत्र और मान्यताओं के अन्तर्गत सैकड़ों कहानियों की सृष्टि की और उनके माध्यम से हमारे समाज की प्रायः समस्त इकाइयों और युग-चेतना को सफल अभिव्यक्ति दी। इनके शिल्प-विधान में कथानक, शैली और चरित्र तीनों दिशाओं में आश्चर्यजनक सुगमता और कला का सहज आकर्षण मिलता है।

प्रेमचन्द ने पहले-पहल कहानियों को बाह्य घटनाओं के जाल से छुड़ाकर, उन्हें मानव-जीवन के अन्तःरहस्यों के उद्घाटन का साधन बनाया। उन्होंने बाह्य रूप-रेखा के लिए आकस्मिक घटनाओं और संयोगों का तो पूरा पूरा उपयोग किया, परन्तु उसकी अन्तः रूपरेखा का विकास मनोवैज्ञानिक चरित्र-चित्रण द्वारा ही किया।

सम्वेदनात्मक दृष्टि से प्रेमचन्द मध्यमवर्गीय पात्रों के कहानीकार हैं और इनके समस्त चरित्र सहज और स्वाभाविक हैं। पात्रो में व्यक्तित्व प्रतिष्ठा आश्चर्यजनक ढग से हुई है। इन्होंने पात्रों की दिशा में कभी जटिलता नहीं उत्पन्न की। ये पात्र जीवन के तूफान में जैसे कभी हत-प्रभ नहीं होते और वे हमारे सामने गूढ़ मानसिक गुत्थियाँ ही रखते हैं, जिनमें जीवन की क्रिया और प्रतिक्रिया का विकट तुमुल आबद्ध रहता है। कहानियों की निर्माण-शैली में आरम्भ, विकास और चरमोत्कर्ष (क्लायमेक्स) ये तीनों भाग पूर्णतः स्पष्ट होते हैं, क्योंकि उनकी कहानियाँ सदैव एक निश्चित लक्ष्य से विकसित होती हैं।

हिन्दी कहानी-कला के समूचे विकास युग में प्रेमचन्द और 'प्रसाद' जी के ही विभिन्न कलागत संस्थानों का ही प्रतिनिधित्व हुआ है तथा इन्हीं की कला की दो प्रमुख प्रवृत्तियों ने इस युग में आश्चर्य-जनक सफलता प्राप्त की। समकालीन कहानीकारों में 'कौशिक', 'सुदर्शन', राधाकृष्ण, राधिकारमणप्रसाद सिंह आदि ऐसे अनेक नाम लिए जा सकते हैं जिन्होंने प्रेमचन्द की तरह आदर्श और यथार्थ का समन्वय किया। 'प्रसाद' की परम्परा हमें गोविन्दवल्लभ पंत की 'जूठा आम', सियारामशरण गुप्त की 'मानसी', पदुमलाल पन्नालाल बख्शी की 'झलमला', विनोदशङ्कर व्यास की 'दीपदान' और चण्डीप्रसाद 'हृदयेश' की 'योगिनी' में मिलती है। कहानी की लोकप्रियता से आकृष्ट होकर पन्त 'निराला', महादेवी, भगवतीचरण वर्मा आदि अनेक कवि इस क्षेत्र में उतरे। इनमें सबसे अधिक सफलता भगवतीचरण वर्मा को प्राप्त हुई। महादेवी की संस्मरणात्मक कहानियों में सम्वेदना और ममता एवं 'निराला' की कहानियों में परिहास और व्यंग्य तो है पर प्रायः इनमें कथांश बहुत कम होता है। उनकी कहानियों में भावात्मकता और सांस्कृतिक चेतना के साथ-साथ रस-संचार तो होता है पर कहानी कुतूहल की परितुष्टि नही होती।

'प्रसाद' के बाद प्रथम वर्ग की कहानियाँ हिन्दी में नया रूप लेकर आई है। वे फ्रान्स के अभिजात यथार्थवादी जोलां आदि से तथा फ्रायड के मनोविश्लेषण से प्रभावित हुईं। जैनेन्द्र, इलाचन्द्र जोशी, भगवतीप्रसाद वाजपेयी आदि का कहानी-साहित्य इन्ही फ्रेंच यथार्थ-वादियों तथा मनोविश्लेषकों से प्रभावित हैं। जैनेन्द्रकुमार, भगवती प्रसाद वाजपेयी, विनोदशङ्कर व्यास इत्यादि कहानी-लेखकों ने मानव-जीवन के साधारण पहलू को छोड़कर असाधारण परिस्थितियों में चरित्रों का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण आरम्भ किया। चरित्र तथा मनः-स्थिति की गूढ़ ग्रन्थियों के विश्लेषण में ऐसे कथा-विधान प्रस्तुत किए

गए कि जिनसे चरित्र सम्बन्धी तमाम कर्म-प्रेरणाएं एक ऐसे सन्धि-स्थल पर एकीकृत हो गईं जिनके सहारे उन गूढ़ चरित्रों का मनो-विश्लेषण प्रस्तुत किया गया।

अज्ञेय, यशपाल, अश्क, पहाड़ी आदि युगीन प्रवृत्तियों के कहानी-कारों की विशिष्ट कलाओं के फल-स्वरूप कथा-विधान की शैली में नए नए रूपों और हस्त-लाघव के परिचय मिले। कहानी की निर्माण-शैली और रूप-विधान में अपूर्व ढंग का वैविध्य, नवीनता और व्यापकता आई।

प्रेमचन्द ने सामाजिक कहानियाँ तो लिखीं और व्यंग्य भी किया पर उनकी कहानियों में विद्रोह और कटुता नहीं है। इस तरह की कहानियाँ 'उग्र', ऋषभचरण जैन, चतुरसेन शास्त्री, चन्द्रकिरण सौन-रिक्सा आदि बाद के लेखकों द्वारा लिखी गई। चन्द्रकिरण सौनरिक्सा की 'कमीनों की जिन्दगी', अमृतराय की 'इतिहास', उग्र की 'हमारा समाज' अश्क की 'चपत' और रांगेय राघव की 'साम्राज्य का वैभव' आदि कहानियाँ इस कोटि की उत्कृष्ट रचनाएं हैं। आज के जन-जीवन को प्रतिबिम्बित करने वाले कहानीकारों में प्रमुख हैं यशपाल और रांगेय राघव। इन्हीं के साथ हम एक उर्दू कहानीकार का नाम ले सकते हैं जो धीरे धीरे हिन्दी के सम्मुख आते जा रहे हैं, ये हैं किशन-चन्दर। इन जन कलाकारों की लेखनी आज उस खाई को पाटती जा रही है जो अब तक साहित्यिक कथाओं और जन-कथाओं के बीच रही है। यशपाल और अश्क दो अलग-अलग दिशाओं में पहुँचे हैं; अश्क जी ने रोमांस से रंग लिया है और यशपाल ने राजनीति से। यशपाल की कहानियाँ घटना-प्रधान हैं जिनमें कहीं तो परिस्थितियों की कटु आलोचना है और कहीं सिद्धान्तों का प्रतिपादन। 'आत्मिक प्रेम' आजकल के कलाकारों का मजाक है तो 'मन के लगाम' में सस्कारों

के आडम्बर पर चुभता व्यंग्य। 'अश्क' की कुछ कहानियाँ पारिवारिक जीवन का अच्छा चित्र खींचती हैं। 'पाप का परिचय', 'मर्द का एतबार' आदि में स्त्री-पुरुष के आपसी समझौते की समस्या है। 'बैंगन का पौधा' आर्थिक विषमता पर तीव्र व्यंग्य है। 'दो आने की मिठाई' भी ऐसी ही कहानी है।

इन कहानियों की टेकनीक पर बाहरी प्रभाव भले ही पड़ा हो, पर इनकी आत्मा शुद्ध भारतीय है। वह आज के बीसवी शती के द्वितीय तथा तृतीय पाद के भारत के समाज का लेखा है। इस पद्धति को इन कलाकारों ने जर्मनी के कलाकर टॉमस मन से सीखा या फ्रेंच कलाकार अरागों से सीखा या अँग्रेजी कलाकार प्रीस्टले अथवा रूसी कलाकार गोर्की तथा शोलोखोव से, यह तथ्य आज हमारे लिए इतना महत्व नहीं रखता जितना यह तथ्य कि ये कलाकार भारत के जन-जीवन के सच्चे कलाकार हैं।

प्रेमचन्द के बाद राजनीति के क्षेत्र में अनेक हलचलें हुईं। इन सब की प्रतिध्वनि हिन्दी कहानी-साहित्य में हुई है। तारा पाण्डे की 'दारोगा की बेटी' तथा अज्ञेय की 'द्रोही' का सम्बन्ध सत्याग्रह से है। जैनेन्द्र की 'एक रात' में देशभक्ति का स्वर है। 'उग्र' ने भी राजनीतिक कहानियाँ सफलतापूर्वक लिखी हैं।

कुछ सुन्दर कोटि की ऐतिहासिक कहानियाँ भी लिखी गईं पर उनकी विचार-धारा आधुनिक ही है। वृन्दावनलाल वर्मा और चतुरसेन शास्त्री ने राजपूत काल की और भगवतशरण उपाध्याय ने प्राचीनकाल की शुद्ध ऐतिहासिक कहानियाँ भी लिखी हैं। यशपाल के 'ज्ञान-दान' और रघुवंश के 'छायातप' सग्रह में भी कई यथार्थवादी ऐतिहासिक कहानियाँ मिलेंगी। सुदर्शन की 'न्याय मंत्री' और 'प्रसाद' की ममता भी सुन्दर कोटि की कहानियाँ हैं। परन्तु यह सब लिखने के पश्चात यह

स्वीकार करना ही पड़ेगा कि ऐतिहासिक उपन्यासों की भाँति ऐतिहासिक कहानियाँ भी हिन्दी में बहुत कम हैं।

ऐतिहासिक कहानियों के अतिरिक्त हास्यपूर्ण, प्राकृतवादी और प्रतीकवादी कहानियों की भी कुछ चर्चा यहाँ अभीष्ट है।

हिन्दी में हास्यपूर्ण कहानियों के लेखक विरले ही हैं। जी० पी० श्रीवास्तव की कहानियों में सुरुचि और साहित्यिकता की कमी है। प्रेमचन्द ने 'मोटेराम शास्त्री' को नायक बनाकर कुछ मजेदार कहानियाँ लिखी है। इसके अतिरिक्त हास्य व्यंगात्मक चित्रण 'निराला' की 'सुकुल की बीबी' और 'चतुरी चमार' शिवपूजन सहाय की 'कहानी का प्लाट', बेढ़ब बनारसी की 'बनारसी एक्का', और 'मसूरी वाली', अन्नपूर्णानन्द की 'अकबरी लोटा' और 'दावत की अदावत' शिक्षार्थी की 'अँग्रेजी सुहागरात' और 'नई कला' अश्क की 'चपत' एवं उग्र की 'कुण्ड गोलक' कहानियों में सफलता से हुआ है।

उग्र, चतुरसेन शास्त्री आदि कतिपय कहानी-लेखकों ने कुछ कहानियाँ प्राकृतवादी शैली की लिखी हैं। इन कहानियों के कलात्मक होने में कोई सन्देह नहीं है। चरित्र-चित्रण एवं शैली की दृष्टि से भी ये कहानियाँ शक्तिशाली हैं। पर साथ ही ये अशिव और कुरुचिपूर्ण हैं।

प्रतीकवादी कहानियां की संख्या हिन्दी में बहुत कम है। राय कृष्णदास की 'कला और कृत्रिमता' और उग्र की 'भुनगा' ऐसी कहानियों के सफल उदाहरण हैं।

आधुनिक हिन्दी कहानी ने पर्याप्त उन्नति कर ली है। इधर दो-तीन वर्षों से कहानी की शैली के सम्बन्ध में नए प्रयोग हो रहे हैं।

लगभग आधी दर्जन पत्रिकाएं केवल कहानियों के बल पर ही निकल रही हैं। पर स्मरण रखना होगा कि हाट में अपने वासनाजन्य आकर्षण पर बिकने वाली कहानी-पत्रिकाएं साहित्य और कला की श्री-वृद्धि नहीं कर सकतीं; वे भोग के भूखों का पेट भर सकती हैं और साहित्य के व्यभिचारियों को धनी बना सकती हैं।

कहानी के तत्व

कहानी के साधारणतः कई अङ्ग माने गए हैं। भगवती प्रसाद जी वाजपेयी ने जो स्वयं एक कहानीकार हैं लिखा है, 'यों तो कहानी को हम कई अङ्गों में विभाजित कर सकते हैं जैसे—कथानक, दृश्य, कथोपकथन, दुविधा की तीव्रता तथा चरम परिणति। किन्तु इनमें कथानक, दृश्य, तीव्र दुविधा तथा चरम परिणति का निर्वाह अपेक्षाकृत असाधारण होता है।'

इस प्रकार रचना की दृष्टि से कहानी के निम्नलिखित तत्व होते हैं:—

(१) कथानक
(२) पात्र और चरित्र चित्रण
(३) कथोपकथन
(४) वातावरण
(५) भाषा और शैली
(६) उद्देश्य

कथानक

कहानी में कथानक का महत्वपूर्ण स्थान है, यही कहानी का ढांचा है; इसके अभाव में कहानी का निर्माण असम्भव है। 'जब से कहानी में मनोवैज्ञानिक अनुभूति और मनोविश्लेषण का प्रादुर्भाव हुआ है, तब से इसका रूप अत्यन्त सूक्ष्म होता जा रहा है। वस्तुतः कथावस्तु का जन्म कहानीकार की उन अनुभूतियों और लक्ष्यात्मक प्रवृत्ति से होता है जिसके धरातल अथवा मूल प्रेरणा से कहानीकार अपनी कहानी का

निर्माण करने बैठता है। आधुनिक कहानी-कला में कहीं-कहीं इस तत्व को बिल्कुल परोक्ष में डाल कर केवल पात्रों अथवा परिस्थितियों के चित्रण से कहानी प्रस्तुत हो जाती है, किन्तु फिर भी व्यापक रूप में कथा-वस्तु का सहारा किसी न किसी रूप में कहानीकार को अपनी कहानी में लेना ही पड़ता है।'*

'कहानी की कथावस्तु का विषय-क्षेत्र निम्नलिखत में एक हो सकता है:—(क) ऐतिहासिक या पौराणिक (ख) राजनीतिक या आर्थिक (ग) सामाजिक (घ) पारिवारिक (ङ) मनोवैज्ञानिक और (च) काल्पनिक।

ऐतिहासिक कथावस्तु इतिहास और तत्सम्बन्धी अनुसंधान पर आधारित रहती है। लेकिन जहाँ इतिहास मौन है, उन रिक्त स्थानों की पूर्ति और प्रासङ्गिक घटनाओं की शृंखला के द्वारा इतिहास के शुष्क तत्व को कहानी-कला का सरस मांसल रूप देने में लेखक कल्पना से काम लेने के लिए स्वतंत्र है। पर ऐतिहासिक कहानी में यह कल्पना का इन्द्रधनुप भी इतिहास के मेघखण्डों पर ही शोभा पा सकता है। ऐतिहासिक कथावस्तु की सम्यक् योजना में 'प्रसाद' और बृन्दावन लाल वर्मा सफल कहे जा सकते हैं।

पौराणिक कथा-वस्तु में सस्कृति के प्राचीन स्वरूप की रक्षा और पौराणिक घटनाओं एवं चरित्रों की मुख्य रूपरेखा का प्रतिनिधित्व आवश्यक है।

राजनीतिक या आर्थिक कथावस्तु की योजना विशिष्ट राजनीतिक या आर्थिक सिद्धान्तों पर आधारित होती है और घटना-विधान से उन सिद्धान्तों की कलात्मक व्यञ्जना होती है। यशपाल की अधिकांश कहानियों के मूल में समाजवादी सिद्धान्त निहित हैं।

---

* हिन्दी कहानियों की शिल्प-विधि का विकास

सामाजिक कथावस्तु में समाज की कुत्साओं और विषमताओं की तस्वीर के साथ साथ सामाजिक आदर्शों की प्रतिष्ठा रहती है । प्रेमचन्द की कहानियाँ इस दृष्टि से सफल हैं । 'उग्र' को सामाजिक कहानियों के क्षेत्र में पथभ्रान्त कहा जा सकता है ।

पारिवारिक जीवन से ली गई कथा-वस्तु में परिवार में व्यक्ति और व्यक्ति के पारस्परिक सम्बन्धों की रहस्यमयता का उद्‌घाटन और तत्सम्बन्धी परिस्थितियो की मार्मिकता की व्याख्या अपेक्षित है । बगला में शरत्‌बाबू और हिन्दी में प्रेमचन्द, जैनेन्द्र और 'कौशिक' इस दृष्टि से अत्यन्त सफल हैं ।

मनोवैज्ञानिक क्षेत्र से ली गई कथा-वस्तु में घटनाओं की योजना का दृष्टिकोण यह होता है कि मानव-मन की विविध निगूढ़ प्रवृत्तियों और उनसे प्रेरित मानव-व्यापार का विश्लेषण किया जाय और मानव-व्यक्तित्त्व के मानसिक पक्ष का मनोवैज्ञानिक अध्ययन प्रस्तुत किया जाय। अज्ञेय और जैनेन्द्र की कुछ कहानियों की कथा-वस्तु इस कोटि की है ।

काल्पनिक क्षेत्र से ली गई कथा-वस्तु में ऐतिहासिक, राजनीतिक, सामाजिक या मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण की अपेक्षा नहीं । उसका उद्देश्य केवल कल्पना की रंगीनियों द्वारा पाठक का मनोरंजन करना है । जीवन के विषम कोलाहल से थक कर पलायन के अभिलाषी पाठकों के लिए ऐसी कहानी विश्रान्ति लाभ की दृष्टि से उपयोगी है ।'

'कहानी का कथानक आरम्भ होकर प्रायः किसी न किसी प्रकार के संघर्ष के द्वारा क्रमशः उत्थान को प्राप्त होता हुआ 'चरम' या तीव्रतमस्थिति (Climax) को पहुँचता है, वहाँ कौतूहल क्रमशः अपनी चरमसीमा को पहुँच जाता है और कौतूहल का चमत्कारिक और कुछ-कुछ अप्रत्याशित ढग से अन्त हो जाता है । वहाँ पर आकर ऊँट एक

निश्चित करवट से बैठ जाता है। इसके पश्चात कहानी का परिणाम या अन्त आता है, जिसमें पूरे तथ्य का उद्घाटन हो जाता है। चरम या तीव्रतम स्थिति परिणाम को अधिक महत्वपूर्ण बना देती है। यह कहानी के लिए अनिवार्य नहीं किन्तु इसके द्वारा कहानी को अधिक उत्कर्ष प्राप्त होता है। किन्हीं-किन्ही कहानियो में यह चरम बिन्दु बड़ा स्पष्ट और नुकीला होता है और किन्हीं में कुछ फैला-सा रहता है। 'प्रसाद' जी की (मधुआ) नाम की कहानी में यह कुछ फैला-सा दिखाई देता है।'

कथानक के विकास की पाँच स्थितियाँ होती हैं—(क) आरम्भ (ख) आरोह (ग) चरम-स्थिति (घ) अवरोह (ङ) अन्त।

आरम्भ के पूर्व कहानी में शीर्षक का नम्बर आता है। "कहानी का शीर्षक विषय-परिचायक होने के साथ-साथ अत्यन्त आकर्षक भी होना चाहिए। शीर्षक आकर्षक तभी कहा जा सकता है जब शीर्षक को देखते ही पाठक का मन कहानी की प्रधान घटना-वस्तु के प्रति उत्कण्ठा और उत्सुकता से इतना भर जाय कि उससे कहानी पढ़े बिना रहा ही न जाय।" "केवल इतना ही आवश्यक नहीं है कि शीर्षक शीर्षक आकर्षक हो, किन्तु कहानी के साथ साथ शीर्षक का सामञ्जस्य होना चाहिए जो कहानी के रहस्य को अपने धुंधले आवरण में छिपाए हो।"*

श्री विनोदशङ्कर व्यास का मत है कि तीन शब्दों का शीर्षक कहानी के लिए बहुत उपयुक्त होते हैं।

कुछ आकर्षक शीर्षकों के उदाहरण ये हैं—'उसने कहा था', 'प्रोफेसर भीमभंटा राव', 'शतरंज के खिलाड़ी'; 'स्वर्ग के खंडहर में'।

---

* कहानी, कला

(क) आरम्भ—कहानी का यह भाग कलात्मक दृष्टि से कहानीकार की कुशलता की परीक्षा का द्योतक है।* कहानी में भूमिका घातक है। आरम्भ से ही गति भर कर अन्त तक पहुँचना चाहिए। एडगर एलेन पो का कथन है—'If his very initial sentence tend not to the out bringing of this effect, then he has failed in his very first step.' एक अन्य आंग्ल विद्वान के शब्दों में 'The first few lines of a story have been well described as the author's letter of introduction to the reader !'

शीर्षक की तरह कहानी का आरम्भ विषय परिचयात्मक हो यह आवश्यक नहीं। क्योंकि आरम्भ में कहानी के मूल रहस्यों को जितना गोपनीय रखा जा सके, उतना ही अच्छा होगा, क्योंकि इन रहस्यों को शनैः शनैः खोलने से ही पाठकों की कौतूहल-भावना क्रमशः बढ़ती जा सकती है।

कहानियों में आरम्भ का मुख्य उद्देश्य है—(१) कहानी के प्रति जिज्ञासा उत्पन्न करना (२) उसकी मुख्य घटना का आभास देना। सब से अच्छा आरम्भ वही है, जिनमें इन दोनों विशेषताओं का सम्मेलन हो। जैसे—'माया हँस देती थी।' मेरे प्रश्नों का सदैव यही उत्तर मिलता था।'

गोविन्द बल्लभ पंत : जूठा आम

(ख) आरोह—इसमें पात्र की मानसिक व्यवस्था या स्थिति या भावना का विकास दिखाया जाता है।

---

*A short story is like a horse-race; it is the start and finish that counts most—Mr. Bellery Sedgwick.

(ग) चरम स्थिति—कहानी की चरम स्थिति वह है जहाँ कहानी की रोचकता अथवा सुन्दरता में क्षण भर में स्तब्धता आ जाती है और पाठक के हृदय में कम्पन होने लगता है। यहाँ आकर कहानी का समस्त कौतूहल और कहानी का सम्पूर्ण अभिप्राय स्पष्ट हो जाता है तथा उससे आगे पाठक की गति समाप्त हो जाती है। एक तरह से यहाँ पहुँच कर कहानी का कार्य सम्पूर्ण हो जाता है। यही वह चरम बिन्दु है, जिसमें 'कहानी' का प्रयोजन निहित है। इसी उच्चतम बिन्दु पर पहुँचने के लिए कहानी अपने सब अङ्गों का सन्तुलन करती हुई गतिशील रहती है।

(घ) अवरोह (पतन)—'आगे क्या हुआ' की जिज्ञासा या उत्सुकता का समाधान ही चरम स्थिति के पश्चात् अवरोह या पतन है।

(ङ) अन्त—आरम्भ की अपेक्षा कहानी का अन्त बनाना सरल है। कहानी आरम्भ करते समय लेखक एक अज्ञात प्रदेश में रहता है। लेकिन अन्त तक पहुँचते पहुँचते कहानी का वातावरण, उसका प्रभाव तथा चरित्रों का विकास, एक निश्चित दिशा में अंकित हो जाता है। लेखक में इतनी क्षमता चाहिए कि वह इन रेखाओं का ध्यान रखते हुए चित्र को स्वाभाविक रूप में पूरा कर दे।

कहानी का अन्त निबन्धों के उपसंहार के समान कहानी के सारांश की सूचना दें, यह अपेक्षित नहीं। आधुनिक कहानी में यह भी नहीं चाहिए कि कहानी के अन्तर्भूत नीतितत्व (Moral) को एकाधिक पंक्तियों में अन्त में घोषित कर दिया जाय। कहानी का अन्त इस ढग से होना चाहिए कि पाठकों की उत्सुकता चरम-परिणाम के ज्ञान के उपरान्त भी बनी रहे। कहानी के अन्त की झकृति जितनी देर तक हमारे मानस में गूँजे, उतना

ही हम कहानी को सफल समझेंगे। 'प्रसाद' की 'बिसाती' शीर्षक कहानी का अन्त बड़ी टीस और दर्द उत्पन्न करनेवाला है—

'बिसाती अपना सामान छोड़ गया, फिर लौट कर नहीं आया। शीरीं ने बोझ तो उतार लिया पर दाम नहीं दिया।'

'कहीं-कहीं कहानी का अन्त चरम सीमा के साथ हो जाता है और कहीं कहीं उसके बाद भी किंतु बहुत बाद नहीं। बहुत बाद में होने से कहानी में शिथिलता आ जाती है।'*

सुखान्त कहानियों में नाटक, उपन्यास की तरह पाँच परिस्थितियाँ होती हैं—(१) आरम्भ, (२) प्रयत्न, (३) प्राप्त्याशा, (४) नियताप्ति (५) फलागम।

आरम्भ—उद्देश्य की सिद्धि के लिए उत्सुकता को आरम्भ कहते हैं।

प्रयत्न—उसकी सिद्धि के लिए गतिशील चेष्टा का नाम प्रयत्न है।

प्राप्त्याशा—कथानक के आगे बढ़ने पर जहाँ उद्देश्य की सिद्धि और असिद्धि दोनों में सिद्धि पक्ष प्रबल दीखे वहाँ प्राप्त्याशा होगी।

नियताप्ति—जहाँ असिद्धि पक्ष बिलकुल तिरोहित हो वहाँ नियताप्ति होती है।

फलागम—जहाँ उद्देश्य की सिद्धि सम्पन्न हो जाय वहाँ अन्तिम अवस्था फलागम होती है।

---

* गुलाबराय—'काव्य के रूप'

पात्र और चरित्र-चित्रण

पात्र कथा वस्तु के संचालक हैं*, अतः निजी व्यक्तित्व रखते हुए भी इन्हे कथानक में घुला मिला रहना चाहिए। पात्रों के निर्माण में कल्पना की अपेक्षा कलाकार की अनुभूति अधिक सजग रहती है। पात्र, अतीत या वर्त्तमान किसी युग विशेष के हों, उनका पार्थिव एवं सप्राण होना आवश्यक है। कहानी के लिए पात्रों की संख्या निश्चित न होने पर भी कम से कम पात्रों का ही समावेश उचित है, क्योंकि अपनी लघु सीमा में वह बहुसंख्यक पात्रों के चरित्र को स्पष्ट नही कर सकती। प्रारम्भ में पात्र दृश्य रहते हुए भी अदृश्य, प्रस्तुत रहते हुए भी अप्रस्तुत रहें, तभी कहानी में रहस्य की सृष्टि होती है और यही रहस्य आनन्द बनता है।

'कहानी में चरित्र चित्रण का महत्व सबसे अधिक है, क्योकि कलात्मक दृष्टि से एक ओर कहानी की संक्षिप्त सीमा के कारण चरित्र का विकास दिखाने का अवसर बहुत ही कम रहता है और दूसरी ओर चरित्र-चित्रण की सम्भावनाएँ इतनी सीमित रहती हैं कि उनसे चरित्रों को स्पष्ट करना परम हस्तलाघव की परीक्षा है।'†

चरित्र-चित्रण के लिए चार साधनों का उपयोग किया जाता है—वर्णन, सकेत, कथोपकथन और घटना। इनके विभिन्न उदाहरण निम्नलिखित हैं।

---

*One of the best definitions ever given of the technique of fiction is that action reveals character and that character demonstrates itself in action and action is only another word for incidents.

—Seon' O' Faolain

† डा० लक्ष्मीनारायण लाल 'हिन्दी कहानियों की शिल्प विधि का विकास

वर्णन द्वारा

वेदों गाँव में महादेव सुनार एक सुविख्यात आदमी था। अपने सायबान में प्रातः से सन्ध्या तक अँगीठी के पास बैठा हुआ खट-खट किया करता था। वह नित्य प्रति एक बार प्रातःकाल अपने तोते का पिंजड़ा लिए कोई भजन गाता हुआ तालाब की ओर जाता था। उसके धुँधले प्रकाश में उसका जर्जर शरीर, पोपला मुँह और झुकी हुई कमर देखकर किसी भी अपरिचित मनुष्य को उसके पिशाच होने का भ्रम हो सकता था।

प्रेमचन्द : आत्माराम

संकेत द्वारा

शरद की पूर्णिमा में बहुत से लोग उस सुन्दर दृश्य को देखने के लिए दूर दूर से आते। युवती और युवकों के रहस्यालाप करते हुए जोड़े, मित्रो की मंडलियाँ, परिवारों का दल उनके आनन्द कोलाहल को मैं उदास होकर देखता। डाह होती, जलन होती। तृष्णा जग जाती। मैं उस रमणीय दृश्य का उपभोग न कर के पलकों को दबा लेता। कानों को बन्द कर लेता।

प्रसाद : चित्र वाले पत्थर

कथोपकथन द्वारा

एक दिन मैंने कहा—'सारे भारतवर्ष में तुम्हारी कविता की धाक, बँधी हुई है, परन्तु क्या यह भी किसी को पता है कि तुम इतने बेपरवाह इतने आलसी हो?'

उन्होंने हँसकर उत्तर दिया—'तुम एक लेख न लिख दो।'

'बदनाम हो जाओगे।'

'उसमें से कुछ भाग तुम्हे भी तो मिलेगा।'

'मैं क्यो लेने लगूँगी। तुम हँस कर टाल देते हो। जरा सोचो तो सही, ऐसी बेपरवाही भी किस काम की ?'

'मैंने तुम्हें घर की रानी बना दिया।'

मैंने धीरे से कहा—'घर की रानी तो मैं बनी, पर तुम अपने दफ्तर की ओर तो ध्यान दिया करो।'

'मैं तुम्हे अपना सुपरिन्टेन्डेन्ट समझता हूँ।'

सुदर्शन : कवि की स्त्री

घटना और कार्य-व्यापार द्वारा

स्नान करने के बाद जब मैं ऊपर छत पर अपने बालों को कंघी से सँवारता तो कभी सामने उमा को देखकर, शीशे को सूर्य की प्रखर किरणों के साथ इस तरह नचाता, जिसमें उसका अक्स उमा के सम्मुख दौड़ता रहे।

उसकी आँखें झलमला उठतीं। मैं अपनी जवानी की नासमझी का आनन्द लेता।

विनोद शङ्कर व्यास : उसकी कहानी

कथोपकथन

कथोपकथन कहानी का मूल स्वर होता है। एक विज्ञ का कथन है कि कहानी सुन्दर चाहे जितनी हो, पर कथोपकथन के बिना गूंगी रहती है। कहानी के विकास-क्रम में कथोपकथन का तत्व उस कलात्मक शृंखला का कार्य करता है जो एक घटना से कहानी की अन्य आगे आनेवाली घटनाओं से हमारा तादात्म्य जोड़ती रहती है। इस तत्व से कहानी की मुख्य सम्वेदना और पात्रों में सीधा सम्बन्ध जुड़ा रहता है। संक्षेप में कथोपकथन को निम्नलिखित विशेषताओं से युक्त होना चाहिए—

(१) कथोपकथन पात्र के अनुकूल, स्वाभाविक होना चाहिए, जिसमें उसका व्यक्तित्व निहित हो ।

(२) भाषा परिस्थितियों के अनुकूल, सरल, शिष्ट; लाक्षणिक और चमत्कार पूर्ण हो ।

(३) हास्य, विनोद और व्यंग्य का समावेश कथोपकथन में मनोरंजकता उत्पन्न करता है ।

(४) कथोपकथन का सबसे बड़ा गुण जिज्ञासा उत्पन्न करना है । जिज्ञासा को सुरक्षित रखकर कहानी के आकर्षण को उत्तरोत्तर बढ़ाया जा सकता है ।

(५) सम्भाषण में नवीनता और अलौकिकता अवश्य होनी चाहिए । सामान्य वार्त्तालाप नीरसता उत्पन्न करते हैं ।

(६) कहानी का अभिनय नहीं होता; अतः संवाद इतने अधिक पूर्ण होने चाहियें कि वे किसी भी प्रकार के अभिनय और संकेत आदि का अभाव न सूचित करें ।

(७) अधूरे वाक्यों का प्रयोग नाटकीय सौन्दर्य की सृष्टि भले ही करें पर उनमें एक ऐसी अस्पष्टता रहती है जो अभिनय का सहारा ढूँढती है अतः कहानी के कथोपकथन में इनका प्रयोग सावधानी से होना चाहिए अन्यथा गति और तीव्रता प्रदान के बजाय ये अस्पष्टता ला देते हैं ।

वातावरण

कहानी में देश; काल और परिस्थितियों के सकलन या समीकरण को शब्द चित्रों के सहारे मूर्त रूप देना ही वातावरण प्रस्तुत करना है । अभिप्रेत प्रभाव की सिद्धि के लिए इसकी आवश्यकता पड़ती है; क्योंकि यह ऐसा जादू है, जो पाठक के मन और दृष्टि पर माया

का जाल डाल देता है और हमें उस लोक में विचरण कराने लगता है जहाँ कहानी के पात्र सजीव और चेतन बने घटनाओं की रंगस्थली में अपना-अपना अभिनय पूरा करते हैं।

'वातावरण वस्तु-विन्यास के वर्णन से किसी कहानी में पूर्णता नहीं प्राप्त करता वह तो बड़ी कथा का कार्य है। सारी कहानी के अभिज्ञान के लिए उसके निर्माण की बड़ी आवश्यकता है। उसका अस्तित्व बहुत बार चिन्तना के सजग स्पन्दन से बनता है और बहुत बार भाव-जगत् की एकतानता से उदय होता है। कहानी चाहे पत्रों में लिखी जाय अथवा दिनचर्या के पृष्ठों में, सम्वादों में उसका निर्माण हो अथवा विवरण में' शील के कण वर्णन में आवें अथवा निष्कर्ष में, उत्तम पुरुष लेखक लेखक हो अथवा अन्य पुरुष, बड़ी तड़क-भड़क के साथ कहानी का आरम्भ हो अथवा साधारण ढंग से, शीर्षक चाहे दूर से घोषणा करने वाला हो अथवा केवल विषय-निर्देश करता हो—वास्तव में वातावरण ही कहानी का प्राण होता है।'

कतिपय कलाकार 'दृश्य चित्रों की अविच्छिन्न परम्परा' को ही कहानी कहते हैं, किन्तु कहानी केवल शब्द-चित्र मात्र नहीं है। दृश्य चित्र साधन है—वातावरण को मूर्तिमान करने का और वातावरण साधन है कहानी में अभीष्ट प्रभाव की सिद्धि का। आधुनिक काल में वातावरण कहानी का एक आवश्यक तत्व है।

भाषा और शैली

कला की प्रेषणीयता की शक्ति शैली पर ही निर्भर करती है। श्रेष्ठ शैली के विषय में एडगर एलेन पो ने लिखा है—The reconciliation of genius with artistic skill

is absolutely necessary. शैली के कुछ गुण; जैसे संगीत, तार्किक क्रम आदि तो विचार से सम्बन्ध रखते हैं और कुछ भाषा से। शब्दों के उपयुक्त चयन और मितव्यय के सम्बन्ध में कहानीकार को विशेष सावधानी से काम लेने की आवश्यकता है। इसी तथ्य को स्पष्ट करते हुए पोकॉक महोदय लिखते हैं—

Every single part of the story must be relevant and to the point. There must be no padding out, no word spinning. Every epithet, every phrase, every sentence should bear in some way upon the plot, character or atmosphere, so that when we come to the end we feel sure that we should not have skipped a line without missing something essential.

कहानी में उपयुक्त शब्द मैत्री, सुसंगठित वाक्य-विन्यास, अकुण्ठित प्रवाह, लक्षणा और व्यंजना शक्तियों का सफल प्रयोग और भाषा की चित्रोपमता की आवश्यकता होती है।

कहानी के लिए बोलचाल की भाषा पर जोर देनेवाले सच्चे रसिक और प्रौढ़ समीक्षक नहीं हैं। वे छोटी कक्षाओं के अध्यापकों की जिद लेकर साहित्य-क्षेत्र में आना चाहते हैं। व्यापक रूप से प्रत्येक कहानीकार की अपनी अलग-अलग भाषा-शैली होती है। प्रत्येक के गद्य में अपना स्वतन्त्र संगीत, भाषा-सौष्ठव और शब्द-सयम होता है।

नीचे विभिन्न प्रकार की भाषा—शैलियों के कुछ उदाहरण दिये जाते हैं।

प्रेमचन्द की मुहावरेदार भाषा का उदाहरण यों है—

'मेरे फेल होने पर मत जाओ, मेरे दर्जे में आओगे, तो दाँतों पसीना आ जागगा, जब अलजबरा और जामेट्री के लोहे के चने चबाने

होगे और इङ्गलिस्तान का इतिहास पढ़ना पड़ेगा।...मेरे दर्जे में आओगे लाला, तो ये सारे पापड़ बेलने पड़ेंगे और तब आटा-दाल का भाव मालूम होगा।'

प्रेमचन्द : बड़े भाई साहब

भाव-प्रधान भाषा का एक उदाहरण देखिए:—'तुम उसका रूप-सौन्दर्य पूछते हो, मैं उसका विवरण देने में असमर्थ हूँ—हृदय में उपमाएं नाच कर चली जाती हैं, ठहरने नहीं पातीं कि मैं उन्हें लिपि-बद्ध करूं। वह एक ज्योति है, जो अपनी महत्ता और आलोक में अपना अवयव छिपाए रखती है। केवल तरल नील, शुभ्र और करुण आँखें मेरी आँखों में मिल जाती हैं; मेरी आँखों में श्यामा कादम्बिनी की शीतलता छा जाती है।'

प्रसाद : देवदासी

'उग्र' की फड़कीली और लोचदार भाषा का एक उदाहरण यों है—

'मेरी एक बीबी थी। गुलाब की तरह खूबसूरत, मोती की तरह आबदार, कोहेनूर की तरह बेशकीमत, नेकी की तरह नेक, चाँद की तरह सादी, लड़कपन की हँसी की तरह भोली और जान की तरह प्यारी।

मेरी एक माँ थी। मसजिद की तरह बूढ़ी, आम की तरह पकी, दया की तरह उदार, दुआ की तरह मददगार, प्रकृति की तरह करुणा-मयी, खुदा की तरह प्यारी और कुरान पाक की तरह पाक।'

उग्र : दोजख की आग

'हृदयेश' की तत्सम प्रधान चमत्कारपूर्ण भाषा का नमूना देखिए—

'विशुद्ध हृदय-कानन के कलित कल्प-कुंज में, भाव-मन्दाकिनी के दुकूलवर्ती विमल शिला-खंड पर बैठे हुए धर्म्म के पाद-पद्म पर स्थिर

होकर, ऐश्वर्य ने पूछा—'मेरे जीवन की सार्थकता कहाँ है ?' धर्म ने उत्तर दिया—'त्याग की वेदी पर ।'

'हृदयेश' : सङ्कल्प

व्यंग्यपूर्ण वाक्य-रचना का एक उदाहरण देखिए—

'घर बगल में होने के कारण, घर बैठे ही मालूम कर लिया कि चतुरी चतुर्वेदी आदिकों से सन्त-साहित्य का अधिक मर्मज्ञ है, केवल चिट्ठी लिखने का ज्ञान न होने के कारण एकक्रिय होकर भी भिन्न फल है—वे पत्र और पुस्तकों के सम्पादक हैं, यह जूतों का ।'

'निराला' : चतुरी चमार

भाषा के सौष्ठव के साथ कहानी के मुख्य गुण संगति और प्रभाव की एकता को न भूलना चाहिए । अच्छी कहानी घटनाओं, भावों, विचारों तथा प्रारम्भ, प्रसार और अन्त में अन्विति लाने का प्रयत्न करती है ।

शैली

कहानी की निम्नलिखित शैलियाँ प्रधानतः प्रचलित हैं—

(१) ऐतिहासिक शैली
(२) आत्म-चरित शैली
(३) पत्रात्मक शैली
(४) डायरी शैली
(५) नाटकीय शैली

ऐतिहासिक शैली

ऐतिहासिक शैली कहानी की समस्त शैलियों में सबसे अधिक सरल, सुगठित और बोधगम्य शैली है । यह कहानी कहने की सबसे

आदि और प्रचलित शैली है। इसमें लेखक अपनी ओर से घटनाओं का, परिस्थितियों का चरित्रों के निगूढ़तम भावनाओं का तथा कहानी की प्रधान समस्या का वर्णन और व्याख्या करने को पूर्ण स्वतंत्र है। वह तटस्थ दर्शक की भाँति है, फिर भी सभी के हृदय के रहस्यों को जानता है और पाठकों को विश्वस्त ढग से बतलाता चलता है।

इस शैली में घटना तथा परिस्थिति का सारा वृत्तान्त इतिहास की भाँति वर्णन कर दिया जाता है। यथा—

'वेदों गाँव में महादेव सोनार एक सुविख्यात आदमी था। वह अपने सायाबान में प्रातः से सन्ध्या तक अंगीठी के सामने बैठा हुआ खट-खट किया करता था। लगातार ध्वनि सुनने के लोग इतने अभ्यस्त हो गए थे कि जब किसी कारण वह बन्द हो जाती तो जान पड़ता था, कोई चीज गायब हो गई है।'

प्रेमचन्द : आत्माराम

और इस तरह कहानीकार समूची कहानी को सुना जाता है।

(२) आत्मचरित-शैली —

आत्मचरित शैली में कहानीकार अथवा कहानी का कोई पात्र 'मैं' के धरातल से आत्म-वर्णन और आत्म-चित्रण के द्वारा पूरी कहानी को कह डालता है। यथा:—

"जब मेरा व्याह हुआ, उस समय मेरी आयु बारह वर्ष से अधिक न थी। मुझे मालूम न था कि ब्याह क्या होता है, न मुझे इस शब्द के अर्थों का ही बोध था। मगर मैं खुश थी इसलिए नहीं कि मेरा विवाह हो रहा है, बल्कि इसलिए कि पहनने को सुन्दर आभूषण मिलेंगे और खाने को मिठाइयाँ।'

सुदर्शन : अन्धेर

यहाँ लेखक स्वयं किसी पात्र-विशेषका प्रतिनिधित्व करता है। अतः जहाँ एक ओर वह विशिष्ट पात्र की मनोगत भावनाओंके सम्बन्ध में सर्वज्ञता का भाव धारण करता है, वहाँ दूसरी ओर अन्य पात्रों की भावनाओं और मनोदशाओं का उसे उतना ही ज्ञान रखने का अधिकार रहता है, जितना उनकी परिस्थिति और चेष्टाओं से ज्ञेय हो। इससे प्रथमतः उसका दायित्व बहुत बढ़ जाता है कि वह जिस पात्र का प्रतिनिधित्व कर रहा हो उसकी मानसिक अवस्था तथा उसकी गतिविधि का मनोवैज्ञानिक ढंग से ठीक-ठीक ज्ञान रखे और उसकी सम्यक् व्याख्या में समर्थ हो। दूसरे अन्य पात्रों की स्वतन्त्र मनोवैज्ञानिक व्याख्या का अवकाश उसे नहीं मिलता। फिर भी कहानी-रचना की यह पद्धति वहाँ अधिक उपादेय है जहाँ एक ही पात्र प्रधान हो और समस्त वस्तु उसी पर केन्द्रित हो।

पत्रात्मक शैली

कहानी कहने की एक और शैली पत्र-शैली (Epistolatory) है जिसमें सारी कहानी पत्रों द्वारा कही जाती है। प्रभाव की दृष्टि से यह शैली अन्य शैलियों से असफल है। इसमें प्रयोगशीलता और कलात्मक आडम्बर ही अधिक है, कहानी की मूल आत्मा अप्रस्फुटित ही रह जाती है। एक तो विभिन्न पत्रों में कहानी की सम्वेदना बिखरी होने के कारण कहानी की एकसूत्रता नष्ट हो जाती है और कहानी में वातावरण का निर्माण नहीं हो पाता दूसरे कहानी के विभिन्न इकाइयों में बट जाने के कारण उसका सम्यक् विकास नहीं हो पाता।

चन्द्रगुप्त विद्यालंकार की 'एक सप्ताह', राधिकारमण सिंह की 'सुरबाला', प्रसाद की 'देवदासी', शिक्षार्थी की 'लिफाफों में प्रेम', विनोदशंकर व्यास की 'अपराधी', उपेन्द्रनाथ 'अश्क' की 'नरक का

चुनाव' और 'मरीचिका' और अज्ञेय की 'सिगनेलर' पत्रात्मक शैली में लिखी गई कहानियों के उदाहरण हैं।

डायरी शैली

पत्र शैली से बहुत कुछ मिलती-जुलती डायरी शैली है जिसमें मुख्य चरित्र अथवा अन्य चरित्रों के डायरी के उद्धरणों में पूरी कहानी कह दी जाती है। इलाचन्द्र जोशी की प्रसिद्ध कहानी 'मेरी डायरी के दो नीरस पृष्ठ' और भगवती प्रसाद वाजपेयी की 'अन्ना' इस शैली के सुन्दर उदाहरण हैं।

उद्देश्य

कहानी-कला के अन्तर्गत उद्देश्य इसका वह तत्व है जिसकी मूल प्रेरणा से कहानी में इतने कलात्मक प्रयत्न और विधानात्मक कुशलता के परिचय देने होते हैं।*

'प्रत्येक कहानी में कोई उद्देश्य अथवा लक्ष्य अवश्य रहता है। कहानी का ध्येय केवल मनोरंजन या लम्बी रातों को काट कर छोटा करना नहीं है वरन् जीवन-सम्बन्धी कुछ तथ्य या मानव मन का निकट परिचय कराना है। किन्तु वह उद्देश्य या तथ्य ईसप की कहानियों की भाँति व्यक्त नहीं किया जाता। वह अधिकांश में व्यञ्जित ही रहता है।' कहानी का एक ही ध्येय लक्ष्य उद्देश्य या प्रयोजन रहता है—फिर चाहे वह एक घटना में ही काम चला ले या अनेक घटनाओं में उसे फैला दे पर अन्त में प्रभाव केन्द्रीयकृत अवश्य होगा। और यही कहानी की आत्मा बसती है। यहीं उसके प्राण स्पन्दित हैं।

---

* The purpose of all these trick or convention is to communicate personality which appearing only to tell a story.

—Sean O' Faolin

कहानी लेखक को अपना उद्देश्य अप्रत्यक्ष रीति से ही व्यक्त करना चाहिए।❀ प्रसिद्ध उक्ति है—Draw life to the life and your moral will draw itself. कहानी में मनोरंजन के साथ पड़ने वाला प्रभाव स्वल्प ही क्यों न हो, कुरुचि उत्पन्न करनेवाला नहीं होना चाहिए। कहानीकार का प्राण अन्तर्जीवन की सूक्ष्म गुत्थियों को सुलझाना ही है। कहानीकार के उद्देश्यों को तीन भागों में बाँटा जा सकता है—(१) किसी विशिष्ट प्रवृत्ति को जगाकर हृदय को सम्वेदनशील बनाना (२) विचार या सिद्धान्त विशेष का प्रतिपादन और प्रचार करना (३) सुन्दर भाव-चित्रों द्वारा मनोरजन करना।

❀ The first duty of an aritist is not to comment and predict but to moralise.

—Ford M. Hueffer.

कहानियों का वर्गीकरण

चरित्र, वातावरण और प्रसंग के सम्यक और आनुपातिक संयोग से कहानी की सृष्टि होती है। अपनी सृष्टि में कहानीकार अपनी संवेदना के अनुकूल कभी कार्य-व्यापार को मुख्यता देता है, कभी चरित्र-चित्रण को और कभी वातावरण को। इस भाँति विभिन्न तत्व की प्रधानता के धरातल से कहानियों का निम्नलिखित वर्गीकरण हो सकता है। यथा—

(१) कथानक प्रधान

कला की दृष्टि से कथानक प्रधान कहानियाँ साधारण स्तर की समझी जाती हैं। किन्तु व्यापकता और प्रसार की दिशा में कथानक-प्रधान कहानी को अधिक महत्व मिला है। कहानी अपने आविर्भाव-युग में मुख्यतः इसी रूप में थी और इस रूप का विकास अत्याधुनिक कहानियों में भी दृष्टिगत है। कथानक प्रधान कहानियों के चरित्र-प्रधान और घटना-प्रधान दो रूप होते हैं और दोनों रूप इसके मुख्य धरातल हैं जहाँ से कहानीकार अपनी सम्वेदना की कलात्मक अभिव्यक्ति उपस्थित करता है। चरित्र-प्रधान कहानियों में चरित्र ही वह मूल केन्द्र होता है जहाँ पर कहानी की मुख्य सम्वेदना स्थिर रहती है। घटना-प्रधान कथानक में घटनाओं के माध्यम से समूचा कथानक निर्मित होता है। ऐसे कथानकों के विकास में दैव-घटना और संयोग का पूरा सहारा लिया जाता है। कथानक प्रधान कहानियों में वर्णन और इतिवृत्ति दो प्रधान अंग हैं। ऐसी कहानियों में प्रवाह और कुतू-हल की विशेष प्रधानता होती है।

ज्वालादत्त शर्मा और पदुमलाल पन्नालाल बख्शी कथानक प्रधान कहानी लिखने में सिद्धहस्त हैं। "कौशिक" इस प्रकार के कहानी लेखकों में सर्वश्रेष्ठ हैं।

(२) कार्य-प्रधान

कार्य-प्रधान कहानियों में सबसे अधिक बल कार्य पर दिया जाता है। बनारस के 'उपन्यास बहार आफिस' से प्रकाशित साहसिक रहस्य-पूर्ण तथा अद्भुत (Fantastic) कहानियाँ इस श्रेणी की प्रतिनिधि हैं। कार्य प्रधान कथानक घटना प्रधान कथानक का ही एक विकसित रूप है। इसमें घटनाएँ आती है किन्तु कार्य-व्यापार की एकसूत्रता में आती हैं अर्थात् कथानक में कार्य-व्यापार की मुख्यता मिलती है और घटनाएँ उसमें साधन रूप में आती हैं। इस प्रकार की कहानियों के प्रतिनिधि लेखक दुर्गाप्रसाद खत्री, गोपालराम गहमरी और मथुराप्रसाद खत्री हैं। दुर्गाप्रसाद खत्री की 'संसार विजयी' कहानी Fantestic कहानियो का सुन्दर उदाहरण है। उनकी दूसरी कहानी 'रूप-ज्वाला' रहस्यों और षड्यन्त्रों से पूर्ण है। कार्य-प्रधान कहानियों में सबसे मजेदार कहानी मथुरा प्रसाद खत्री की 'शिखण्डी' है जिसमें एक जानवर—डिनासरस—की रोचक भ्रमण कथा वर्णित ह। इस कहानी में हास्य और कौतूहल का प्राधान्य है।

(३) चरित्र-प्रधान

चरित्र-प्रधान कहानियों का मुख्य उद्देश्य चरित्र-चित्रण और चरित्र-विश्लेषण होता है। कार्य-व्यापार, घटनाओं और प्रसंगों की योजना इसलिए होती है कि चरित्र-विशेष को विशेष प्रसगों और परिस्थितियों में चित्रित करना आवश्यक होता है।

कहानियों में स्थानाभाव के कारण चरित्र के सभी अंगों और पक्षों का विशेष विवरण देना सम्भव नहीं है इसलिए केवल एक पक्ष ही बडी साव-

धानी से चित्रित किया जाता है और अन्य सभी पक्ष अधूरे रह जाते हैं। किसी चरित्र के विशेष गुणो के दिग्दर्शन के लिए उस चरित्र को विशेष प्रसंगों और परिस्थितियों में चित्रित करना आवश्यक है जिसके लिए कहानी में पर्याप्त स्थान नहीं रहता। इसलिए चरित्रों के व्यक्तीकरण के लिए लेखक अधिक से अधिक दो-चार अर्थ-गर्भित वाक्यों द्वारा चरित्र की विशेषताओं का दिग्दर्शन करा देता है।

चरित्र प्रधान कहानियों में एक प्रकार की कहानियाँ ऐसी होती हैं जिसमें किसी दृश्य या घटना की प्रतिक्रिया स्वरूप मुख्य चरित्र में अचानक परिवर्त्तन हो जाता है। 'कौशिक' की सर्वोत्तम कहानी 'ताई' और प्रेमचन्द की 'आत्माराम' और 'शंखनाद' ऐसी कहानियों के सुन्दर उदाहरण हैं।

विकास-युग में चरित्र-प्रधान कहानियों के सर्वश्रेष्ठ लेखक प्रेमचन्द हैं। इनकी कहानियों में मनोविज्ञान अपने तात्विक रूप में प्रयुक्त हुआ है। हिन्दी कहानियों के संक्रान्ति युग में फ्रायड के मनोविश्लेषण से प्रभावित चरित्र-प्रधान कहानियाँ और भी समुन्नत तथा सुदृढ़ हुईं। अब चरित्र प्रधान कहानियों में चरित्र-चित्रण के बाह्य विश्लेषण की अपेक्षा चरित्र के आन्तरिक विश्लेषण की प्रतिष्ठा हुई। जैनेन्द्र, अज्ञेय, इलाचन्द्र और यशपाल इस प्रवृत्ति के उन्नायकों में से हैं।

गुलेरी की 'उसने कहा था', प्रेमचन्द की 'आत्माराम', चतुरसेन शास्त्री की 'खूनी', जैनेन्द्रकुमार की 'मास्टरजी', यशपाल की 'अगर हो जाता', इलाचन्द्र जोशी की 'मैं', 'अश्क' की 'बैंगन का पौधा', और अज्ञेय' का 'नम्बर दस' चरित्र प्रधान कहानियों के सुन्दर उदाहरण हैं।

(४) वातावरण प्रधान

वातावरण प्रधान कहानी केवल वातावरण से युक्त कहानी नहीं है

हमारे प्रतिदिन के जीवन के कार्य-व्यापारों में एक अलौकिक परिपार्श्व और वातावरण की प्रेरणा होती है। इस प्रेरणा को कहानी की सम्वेदना के साथ पूर्ण रूप से चित्रित करने से कहानी वातावरण-प्रधान हो जाती है। वातावरण के निर्माण में प्रकृति चित्रण तथा रूप-चित्रण इसकी मुख्य विशेषताएँ हैं। ऐतिहासिक कहानियों में वातावरण की अवतारणा परम आवश्यक तत्व है। क्योंकि इसके बिना न तो कहानी में ऐतिहासिकता ही आ सकती है, और न कहानी का वह चरम उद्देश्य ही चरितार्थ हो सकता है, जिसके आधार पर वह कहानी लिखी गई है। 'प्रसाद' की प्रतिनिधि ऐतिहासिक कहानियाँ इस दृष्टि से परम सफल हैं।

कला की दृष्टि से वातावरण प्रधान कहानियों का महत्व सर्वाधिक है। लेखक वातावरण के चित्रण और परिपार्श्व की अवतारणा में मनमाना रंग भर सकता है और नाद-ध्वनि की व्यन्जना कर सकता है।
वस्तुतः वातावरण प्रधान कहानियों में कवित्वपूर्ण भावना, उसकी कलात्मक अभिव्यक्ति, नाटकीय स्थिति की अवतारणा और उनमें चरित्रों के संघर्ष उसकी मुख्य विशेषताएँ हैं।

हिन्दी में वातावरण-प्रधान कहानियो का बाहुल्य है। परन्तु वातावरण प्रधान कहानियों के सर्वश्रेष्ठ लेखक हैं 'प्रसाद', 'सुदर्शन' और गोविन्द वल्लभ पत। विकास-युग में इस दिशा में 'प्रसाद' अद्वितीय हैं और संक्रान्ति-युग में अज्ञेय और जैनेन्द्र कुमार।

'प्रसाद' की 'आकाश-दीप', प्रेमचन्द की 'शतरंज के खिलाडी' सुदर्शन की 'हार की जीत', चन्द्रगुप्त विद्यालंकार की 'डाकू' विश्वम्भर नाथ जिज्जा की 'परदेसी' और गोविन्द वल्लभ पत की 'जूठा आम' कहानियाँ वातावरण-प्रधान कहानियों के उत्कृष्ट उदाहरण हैं।

(५) विविध कहानियां

इन चार प्रकार की कहानियों के अतिरिक्त हास्यपूर्ण, प्राकृतवादी ओर प्रतीकवादी कहानियों की भी कुछ चर्चा यहाँ अभीष्ट है।

हिन्दी में हास्यपूर्ण कहानियों के लेखक विरले ही हैं। जी० पी० श्रीवास्तव की कहानियों में सुरुचि और साहित्यिकता की कमी है। प्रेमचन्दजी ने 'मोटेराम शास्त्री', को नायक बनाकर कुछ मजेदार कहानियाँ लिखी है। इसके अतिरिक्त हास्य-व्यंग्यात्मक चित्रण 'निराला' की 'सुकुल की बीबी' और 'चतुर चमार', शिवपूजन सहाय की, 'कहानी का प्लाट', 'बेढब बनारसी' की 'बनारसी एक्का' और 'इण्टरव्यू', अन्नपूर्णानन्द की 'अकबरी लोटा' और 'दावत की अदावत' शिक्षार्थी की 'अंग्रेजी सुहागरात' और 'नई कला' 'अश्क' की 'चपत' और 'उग्र' की 'कुण्ड गोलक' कहानियो में सफ़लता से हुआ है।

उग्र, चतुरसेन शास्त्री आदि कतिपय कहानी लेखकों ने कुछ कहानियाँ प्राकृतवादी शैली की लिखी हैं। इन कहानियो के कलात्मक होने मे कोई सन्देह नहीं है पर साथ ही ये अशिव और कुरुचिपूर्ण है।

प्रतीकवादी कहानियों की संख्या में हिन्दी में बहुत कम है। रायकृष्णदास की 'कला और कृत्रिमता' और 'उग्र' की 'भुनगा' ऐसी कहानियो के सफल उदाहरण हैं।

(ii)

आचार्य शुक्ल ने वस्तु-समष्टि के स्वरूप की दृष्टि से कहानियों का निम्नलिखित वर्गीकरण किया है:—

(१) सामान्यतः जीवन के किसी स्वरूप की मार्मिकता सामने लानेवाली अधिकतर कहानियाँ इस वर्ग के अन्तर्गत आयेंगी।

(२) भिन्न-भिन्न वर्गों के संस्कार का स्वरूप सामने रखनेवाली प्रेमचन्द जी की 'शतरंज के खिलाड़ी' और ऋषभचरण जैन की 'दान' नाम की कहानी।

(३) किसी मधुर या मार्मिक प्रसंग कल्पना के सहारे किसी ऐतिहासिक काल का खण्ड चित्र दिखानेवाली। जैसे रायकृष्णदासजी का 'गहूला' और जयशंकर 'प्रसाद' जी की 'आकाशदीप'।

(४) देश की सामाजिक और आर्थिक दशा से पीड़ित जन समुदाय की दुर्दशा सामने लानेवाली, जैसे श्री भगवती प्रसाद वाजपेयी की 'निंदिया लागी' तथा श्री जैनेन्द्र कुमार की 'अपना-अपना भाग्य' नाम की कहानी।

(५) राजनीतिक आन्दोलन में सम्मिलित नवयुवकों के स्वदेश-प्रेम, त्याग, साहस और जीवनोत्सर्ग का चित्र खड़ा करने वाली, जैसे पाण्डेय बेचन शर्मा 'उग्र' की 'उसकी माँ' नाम की कहानी।

(६) समाज के भिन्न-भिन्न क्षेत्रों के बीच धर्म, सुधार, व्यापार व्यवसाय, सरकारी काम, नई सभ्यता आदि की ओट में होनेवाले पाखण्डपूर्ण पापाचार के चटकीले चित्र सामने लानेवाली कहानियाँ जैसी 'उग्र' जी की हैं।

(७) सभ्यता और संस्कृति की किसी व्यवस्था के विकास का आदिम रूप झलकानेवाली, जैसे रायकृष्णदास जी की 'अन्तःपुर का आरम्भ'।

(८) अतीत के किसी पौराणिक या ऐतिहासिक काल-खण्ड के बीच अत्यन्त मार्मिक और रमणीय प्रसंग का अवस्थान करनेवाली,

जैसे श्री बिन्दु ब्रह्मचारी और श्रीमंत समंत (पं० बालकराम विनायक) की कहानियाँ ।

(९) हास्य विनोद द्वारा अनुरञ्जन करनेवाली । जैसे जी० पी० श्रीवास्तव, अन्नपूर्णानन्द और कान्तानाथ पाण्डेय 'चोंच' की कहानियाँ।

कथावस्तु की विविधता के कारण कहानियों के भी बहुत से भेद किये जा सकते हैं । शुक्ल जी ने मुख्य भेदों के आधार पर ही यह वर्गीकरण किया है ।

कहानीकारों का आलोचनात्मक परिचय

चतुरसेन शास्त्री

शास्त्री जी ने संख्या में बहुत अधिक कहानियाँ लिखी हैं पर उनकी प्रतिभा का यथार्थ मूल्यांकन उनकी ऐतिहासिक कहानियों के द्वारा किया जा सकता है। इनमें कार्य-वस्तु से सम्बन्धित देश, काल और परिस्थिति का पूरा ज्ञान और उसकी सहज अभिव्यक्ति मिलती है। इनमें कथा-निर्माण, कल्पना और इतिहास के इतने रुमानी धरातल से किया गया है कि ये कहानियाँ सदा अमर रहेंगी। आपकी सामाजिक कहानियों में भी कल्पना, नाटकीय स्थिति, संयोग और आदर्श आदि तत्वों का आपस में अद्भुत तादात्म्य हुआ है।

आपकी भाषा ओजस्विनी और भाव-व्यन्जक है। नाटकीय लाघव और गति आपकी भाषा की अपनी विशेषता है। शास्त्री जी की कहानियों का सम्मान उसके कलात्मक गठन की अपेक्षा भाषा की अभिव्यंजना शक्ति के कारण अधिक है। प्रारम्भिक युग से लेकर अब तक की उनकी कहानियों में वस्तु-विन्यास का ही परिवर्तन दिखलाई पड़ता है, शैली-विन्यास का नहीं!

भगवती चरण वर्मा

कहानी लिखने में जितनी सफलता भगवती चरण वर्मा को मिली उतनी 'प्रसाद' जी को छोड़कर छायावाद-युगके किसी भी कवि को नहीं! नवीन शिक्षा और आविष्कारों के साथ जो युग भारत में आया है, उसके आप प्रतिनिधि हैं।

वर्मा जी विद्रोह-भावना के कथाकार हैं। यह विद्रोह किसी निश्चित आन्दोलन का द्योतक नहीं वरन् आज के अस्त-व्यस्त जीवन से उत्पन्न विवश क्षोभ की प्रतिक्रिया मात्र है। पर उनकी कहानियों में केवल समस्याएँ हैं, समाधान नहीं; केवल चित्र हैं, सन्देश नही! वर्मा जी का दृष्टिकोण घोर वस्तुवादी है। उन्होंने समस्त सृष्टि को अविश्वास और नास्तिकता की दृष्टि से देखा है। इनके पात्र इन्हीं के शब्दों में 'जिन्दगी की उलझनों को दूसरे के कन्धोपर और भी विकृत रूप करके डालकर चले जानेवाले मनुष्य हैं।'

वर्मा जी का दृष्टिकोण उनकी कहानी की बाधा है और उनकी एकांगिता उनकी सीमा बतलाती है। व्यापकता भी कला की एक कसौटी है, पर यह वर्मा जी का क्षेत्र नहीं। उनकी कहानियों में उनके व्यक्तित्व की छाप है और यह उनकी शक्ति है।

सुदर्शन

प्रेमचन्द–संस्थान में सुदर्शन वस्तुतः प्रमुख प्रतिनिधि कहानीकार हैं। साभिप्राय रचना, सामाजिक दृष्टिकोण, अभिव्यक्ति की स्पष्टता और व्यावरिक भाषा के लिहाज से सुदर्शन जी प्रेमचन्द जी के अत्यन्त निकट हैं पर वह वस्तु जो सुदर्शन को प्रेमचन्द से पृथक करती है, संक्षिप्तता का सौन्दर्य है।

सुदर्शन की अधिकांश कहानियाँ दैनिक जीवन की विविध इकाइयों के धरातल से लिखी गई हैं। ऐसी कहानियों में व्यक्ति और समाज की समस्याओं तथा जीवन की विरोधी परिस्थितियों को अभिव्यक्ति मिली है। इनमें कथावस्तु, उद्देश्य और चरित्र तीनों का सुन्दर तादात्म्य हुआ है।

सुदर्शन जी ने पुराण कथा या रूपक कथा के ढंग पर भी कुछ कहानियाँ लिखी हैं जिनमें घटनाएँ अलौकिक होती हैं और पात्र प्रतीक

मात्र ! 'न्यायमंत्री' और 'हार की जीत' क्रमशः आपकी ऐतिहासिक और प्रभाव-प्रधान कहानियों के उत्कृष्ट उदाहरण हैं ।

'सुदर्शन' जी उर्दू से हिन्दी में उसी तरह आए जैसे यशपाल पंजाब से यू० पी० में । पर आपकी भाषा में उर्दू का कण्ठ-स्वर कम बोलता है । आपकी अधिकांश कहानियों की भाषा, अकृत्रिम, आयास-हीन और व्यावहारिक है ।

चन्द्रधर शर्मा गुलेरी

गुलेरी जी का कहानी-साहित्य केवल तीन कहानियों 'सुखमय जीवन' 'बुद्धू का काँटा' और 'उसने कहा था' से निर्मित है । तीनों कहानियाँ सामाजिक हैं परन्तु समस्त सामाजिक मान्यताओं और कर्त्तव्यों के बीच इन कहानियों की सम्वेदनाएँ मुख्यतः प्रेम और कर्त्तव्य को लेकर आई है । गुलेरी जी के चरित्र मानवीय और यथार्थ हैं । इनकी अवतारणा, व्यक्ति, समाज और उसकी मान्यताओं के धरातल पर हुई है ।

शैली के व्यापक प्रकाश में गुलेरी जी अपनी कहानियों की निर्माण-शैली में आदि, मध्य और अन्त तीनों की योजनाओ में बहुत उदार हो गए हैं । कहानियों की भाषा अत्यन्त स्वाभाविक और जीवनपूर्ण है । भाषा और वर्णन के ही अनुरूप इन कहानियों में कथोपकथन की भी सुन्दर सृष्टि हुई है ।

गुलेरी जी की तीनों कहानियाँ लक्ष्य के धरातल से लिखी जानेपर भी अनुभूतियों से ओतप्रोत हैं । व्यक्ति, समाज और वर्ग तीनों के सुन्दरतम आदर्श इन कहानियों में मिलते हैं ।

प्रेमचन्द

आधुनिक कहानियों में विकास का प्रथम और प्रमुखतम सूत्र प्रेमचन्द की देन है। 'उन्होंने ही पहले पहल कहानियों को बाह्य घटनाओं के जाल जे छुड़ाकर उन्हें मानव-जीवन के अन्तःरहस्यों के उद्घाटन का साधन बनाया।' सम्वेदनात्मक दृष्टि से प्रेमचन्द मध्यवर्गीय पात्रों के कलाकार हैं। कहानी की निर्माण-शैली में आरम्भ, विकास और चरम सीमा ये तीनों भाग पूर्णतः स्पष्ट होते हैं क्योंकि उनकी कहानियाँ सदैव एक निश्चित लक्ष्य से विकसित होती हैं।

प्रेमचन्द यथार्थवादी परम्परा के कर्णधार हैं, अतएव इनकी कहानी-कला में वे समस्त शिल्पगत प्रवृत्तियाँ विद्यमान है जो कहानी-कला की आधार-शिलाएँ हैं। उन्होंने अपनी कहानियो के माध्यम से हमारे समाज की प्रायः समस्त इकाइयों और युग-चेतना को सफल अभिव्यक्ति दी। इनके शिल्प-विधान में कथानक, शैली और चरित्र तीनों दिशाओं में आश्चर्यजनक सुगमता और कला का सहज आकर्षण मिलता है।

जयशङ्कर 'प्रसाद'

'प्रसाद' जी अपनी कहानियों में प्रेम, सौन्दर्य और रहस्य-भावना के कहानीकार हैं। कुछ विशुद्ध सामाजिक और यथार्थवादी कहानियों को छोड़कर शेष सब कहानियाँ प्रतीकात्मक और ऐतिहासिक कोटि में रखी जा सकती हैं। प्रतीकात्मक कहानियों का मूल धरातल कल्पना और भावुकता है, अतएव ये कहानियाँ अपने कलागत स्वरूप में रेखा चित्र और गद्यगीत के समीप चली जाती है।

'प्रसाद' की कहानियों में कल्पना का प्रचुर माधुर्य है। चित्रण और कथोपकथन बडे सजीव और नाटकीय हैं। अन्तर्द्वन्द भी है किन्तु उसे वर्णन करने का कौशल अधिक है। उनकी कहानियों में उद्देश्य अथवा

प्रयोजन का तत्व उतना स्पष्ट नहीं है और न उस तत्व से बँधी हुई घटना-श्रृंखला ही वेगवती है। 'प्रसाद' की कहानियों में 'कहानी' की अपेक्षा वस्तु-अंकन की प्रवृत्ति अधिक है जिसके कारण उनकी कहानियाँ में आवश्यक गत्वरता नहीं आ सकती है। सांस्कृतिक और भावात्मक लेखन की दृष्टि सी 'प्रसाद'की कहानियाँ अनुपम है किन्तु विशुद्ध 'कहानी' के सब लक्षण उनमें घटित नहीं होते।

'कौशिक'

'कौशिक' जी की कहानी-कला में पूर्णरूप से प्रेमचन्द-कला का प्रतिनिधित्व हुआ है। 'कौशिक' जी की कहानियों का प्रमुख विषय मध्यवित्त वर्ग की समस्याएँ हैं और इस मध्यवित्त समाज के जीवन के सुख-दुख के चित्रण में इन्हें पर्याप्त सफलता मिलती है। गृहस्थ-जीवन का विशद एवं सजीव चित्रण, सरल और स्वाभाविक शैली, विनोदप्रियता तथा शिष्ट हास्य, संयोग तथा दैवी घटनाओं का आश्रय इनकी कहानियों की विशेषता है। 'कौशिक' जी संलाप-शैली के सर्वश्रेष्ठ कहानीकार हैं।

'कौशिक' जी की कहानियों में यत्र-तत्र विचारात्मक संदर्भ अनावश्यक रूपसे लम्बे हो गए हैं। 'No admittance except on businees' वाली बात कौशिक जी की कहानियों में नहीं है। उनकी कहानियों में संक्षिप्तता नहीं विस्तार है, सांकेतिकता नहीं निश्चयात्मकता और स्पष्टता है।

'कौशिक' जी की शैली में कहानीपन और चरित्र-चित्रता में रूढ मनोविज्ञान है।

रायकृष्णदास

राय कृष्णदास की कहानियों में प्रेमचन्द के वस्तु-चित्रपट और प्रसाद के मर्म-व्यञ्जक चित्रण का सुन्दर सम्मिश्रण है। राय साहब ने

कल्पना और भावुकता की प्रेरणा से इतिहास और अतीत के धरातल से कहानियाँ लिखी हैं। 'अन्तःपुर का आरम्भ', 'गहूला' और 'प्रसन्नता की प्राप्ति' आपकी उत्कृष्ट कहानियाँ हैं। इन तीनों कहानियों में चरित्र-अवतारणा भावुकता और कल्पना के धरातल पर हुई है। इनमें मनोवैज्ञानिक द्वन्द का आकर्षण सफलता से व्यक्त हुआ है। कहानियों के विकास और अन्त में नाटकीय तत्व विशेष रूप से आए हैं।

राय कृष्णदास जी भाव-भाषा के मनोरम समीकरण के लिए हिन्दी में प्रसिद्ध हैं। संस्कृतमयी भाषा और भावपूर्ण अभिव्यञ्जना आपकी कहानियों की विशेषता है। कवित्वपूर्ण वातावरण की सृष्टि और नाटकीय तथा आदर्शवादी परिस्थितियों का सर्जन 'प्रसाद' जी की भाँति ये नहीं कर पाए पर आपकी कहानियों में एक विदग्ध भाव-प्रवणता मिलती है।

विनोदशङ्कर व्यास

विनोदशङ्कर व्यास प्रसाद की कहानी-कला के उत्तराधिकारी माने जाते हैं। व्यास जी की भाव-पूर्ण लघु-कहानियों में गद्य-गीत; रेखा-चित्र और कहानी तीनो के तत्व मिलते हैं। अधिकांश कहानियाँ करुणा और मानवीय सम्वेदना को लक्ष्य बनाकर लिखी गई हैं; उनमें अनुभूति की प्रेरणा मुख्य है। इनकी शिल्प-विधि की प्रतिनिधि कहानियों में कथानक-निर्माण घटना-संयोग से न होकर स्वाभाविक भाव-विकास और चरित्र-विश्लेषण के आधार पर हुआ है। चरित्र-अवतारणा में भी चारित्रिक द्वन्द की तीव्रता इनकी कहानियों में मुख्य रूप से है।

व्यास जी ने प्रायः अपनी कहानियों में सामान्य चरित्रों को न लेकर विशिष्ट चरित्रों को लिया है। लेकिन उन्होंने उनमें पूर्ण कलात्मकता से मानवीय सम्वेदना और अनुभूति की प्राण-प्रतिष्ठा की है।

विशुद्ध शैली के प्रकाश में इन्होंने प्रायः कथोपकथनात्मक और ऐतिहासिक शैली में कहानियाँ लिखी हैं।

जैनेन्द्र कुमार

भाषा, रूप-विधान और विचार-धारा, तीनों दृष्टियों से जैनेन्द्र, प्रेमचन्द और प्रसाद से अलग एक विशिष्ट स्थान रखते हैं। जैनेन्द्र की शैली दृष्टान्तात्मक कथा की नवीन शैली है, प्रवचन की पद्धति का उन्होंने साहित्यिक विकास किया है। 'नेति-नेति' के कारण उनकी भाषा में एक दार्शनिक संकोच है, इसलिए वस्तु-स्थिति को वे बिना किसी अतिरेक-व्यतिरेक के उसके बिलकुल ठीक मीटर में रखने का यत्न करते हैं। जैनेन्द्र की यह सहज अभिव्यक्ति उनके मन के मुहावरों से सधी-बँधी है। वे सूक्ष्मदर्शी मनोवैज्ञानिक दार्शनिक हैं।

जैनेन्द्र ने अपनी कहानियों में आदर्शवाद की ओर से यथार्थवाद को एक मनोवैज्ञानिक नवीनता दी। पूर्ण आदर्श और पूर्ण यथार्थ को एकत्र कर जैनेन्द्र ने दोनों युगों को भी एकत्र कर दिया है। यथार्थवादियों की अपेक्षा उनकी अभिव्यक्ति अधिक आधुनिक है।

मनोविज्ञान के धरातल से उन्होंने व्यक्ति का जो अध्ययन दिया है वह अनुपम है। कहानी-शिल्प-विधि द्वारा उन्होंने जीवन के व्यापक रूप और दार्शनिक पक्ष और व्यक्ति के उन मूल नैतिक प्रश्नों को लिया है जो हमारी संस्कृति और विकास के मेरुदण्ड हैं।

भगवती प्रसाद वाजपेयी

वाजपेयी जी ह्रासोन्मुख जीवन के भावुक कथाकार हैं। उनकी कहानियाँ सामाजिक संघर्षों के कोलाहल को नहीं; वैयक्तिक मनोभावो के एकान्त को उपस्थित करती हैं। इन कहानियों में उच्च और मध्य-वर्ग के निष्क्रिय संस्कारों, एकांतिक भावनाओं, विषमताओं और कुण्ठाओं का चित्र उपस्थित किया गया है।

रोमांस और वेदना आपकी कहानियों के प्रमुख निर्माण तत्व हैं। वैयक्तिक आकांक्षाओं; प्रेमाख्यानी कल्पनाओं एकान्तिक आदर्श और मूढ़ता विजड़ित परणति से बनी कहानियों का सामाजिक दृष्टि से चाहे जो मोल हो, पर वे कला-सृष्टि की सम्भावनाओं से भरी होती हैं।

वाजपेयी जी की भाषा संस्कृतनिष्ठ और साहित्यिक है। उनकी शैली में काव्य सुलभ कल्पना और दर्शन की मन्थरता है।

वाजपेयी जी अपनी इधर की कहानियों में मनोविश्लेषण और चारित्रिक अन्तर्द्वन्द के धरातल पर स्थिर होकर अपनी शिल्प-विधि के सुन्दर उदाहरण प्रस्तुत कर रहे हैं।

पाण्डेय बेचन शर्मा 'उग्र' ९५

'उग्र' जी का कहानीकार व्यक्तित्व प्रसाद-संस्थान में सबसे अधिक आकर्षक है। 'उग्र' की भाव-प्रवाह और व्यञ्जना-शैली की सहज मनोरंजकता में अकेले हैं। कथन की रमणीयता और दृश्य की रोचकता में उनकी समता कर सकनेवाला कथाकार दूसरा नहीं है; भाषा मादक है, उपमाएँ नई और अल्हड़पन से ओत-प्रोत। साम्य स्थापन की 'उग्र' में अद्भुत क्षमता है। इसीलिए रूपकों में चमत्कार तथा सादृश्य आदि की बहुत मनोहर योजना हो सकी है।

'उग्र' हिन्दी-साहित्य में एक उल्कापात की भाँति आकर विलीन हो गए। उनके वासनापूर्ण नग्न-वर्णन में तटस्थता की अपेक्षा तन्मयता अधिक है। उसे पढकर पाठक अनैतिकता के प्रति क्षुब्ध होने की अपेक्षा लुब्ध ही अधिक होगा। इसीलिए उनका यथार्थ का आग्रह स्तुत्य होते हुए भी अपनी अभिव्यक्ति में निन्द्य हो उठा है। जो भी हो, 'उग्र' की प्रतिभा और लेखनी की शक्ति का हिन्दी-संसार आज भी कायल है।

मोहनलाल महतो 'वियोगी' ९२

'वियोगी' जी छायावादो कवि है और कुशल संस्मरण-लेखक।

काव्य और संस्मरण दोनों में ही कल्पना और अनुभूति के चमत्कार-पूर्ण समन्वय की आवश्यकता होती है। इनकी कहानियों में भी उसी कवि-कल्पना का मूर्त्त रूप दिखाई पड़ता है।

आपकी कहानियाँ परिमाण में स्वल्प होनेपर भी विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। ये कहानियाँ प्रभाव-प्रधान कहानियों की श्रेणी के अन्तर्गत आती हैं। 'वियोगी' जी प्रभाव की सृष्टि के लिए कथानक को पुराण-कथा का रूप देने में विशेष प्रवीण हैं। इस ढंग की कहानियाँ हिन्दी में कम ही लिखी गई हैं। परन्तु सर्वत्र आपकी कहानियों का यही रूप नहीं है। बहुत सी कहानियों का सम्बन्ध हमारे सामाजिक क्षेत्र से है जिसकी समस्याओं पर प्रकाश डालना ही लेखक का अभीष्ट है।

रस-सिद्ध कवि होने के कारण आपकी कहानियों की भाषा काव्य पूर्ण होती है। अंकित किये गए चित्र बड़े ही सुकुमार, भावपूर्ण और संश्लिष्ट होते हैं।

'अज्ञेय'

प्रेमचन्द और जैनेन्द्र के बाद हिन्दी-कहानी को नई दिशा देनेवालों में 'अज्ञेय' और यशपाल अग्रणी हैं।

अज्ञेय विशुद्ध मनोवैज्ञानिक प्रवृत्ति के प्रतिधि कलाकार हैं। उनकी कहानी-कला का मूल धरातल व्यक्ति-चरित्र है। विद्रोह के धरातल से आविर्भूत चरित्र, सामाजिक, राजनीतिक तथा व्यक्तिगत प्रश्नों सौर मूल्यों को लेकर आए हैं। विश्लेषण का आग्रह अज्ञेय के चरित्रों में सबसे अधिक है। कहानी-निर्माण में शैली की विविधता और इसमें विभिन्न प्रयोग तथा प्रकार 'अज्ञेय' की शिल्प विधि की सबसे बड़ी विशेषता है।

चित्रण, वर्णन, कथोपकथन, भाषा-सौष्ठव और शब्द-संयम आदि में 'अज्ञेय' का हस्त-लाघव और लेखन-शिल्प अपनी पूर्ण सफलता पर है। अज्ञेय की कथा-शैली में आश्चर्यजनक सयम, गम्भीरता, चयन और परिष्कार मिलता है। यही कारण है कि उनकी भाषा अमूर्त्त से अमूर्त्त मनोद्गारों, घात-प्रतिघात और मानसिक द्वन्द की अभिव्यक्ति में सदैव सफल रही है।

चन्द्रगुप्त विद्यालंकार

चन्द्रगुप्त विद्यालंकार प्रेमचन्द वर्ग के समस्त कहानीकारों में अपेक्षाकृत अधिक कलात्मक प्रतिभा के कहानीकार हैं। इन्होंने प्रेमचन्द-संस्थान में सुदर्शन की भाँति अपनी मौलिक प्रतिभा का सहयोग दिया है। इन्होंने अपनी स्वतन्त्र प्रेरणा से कहानियाँ लिखी हैं। यही कारण है कि इनमें भावनात्मक विभिन्नता और प्रसार दृष्टिगत है।

प्रभाव-प्रधान कहानियाँ लिखने में आप सिद्धहस्त हैं। 'कामकाज' 'क ख ग' आदि कहानियाँ इसके उत्कृष्ट उदाहरण हैं। इन कहानियों में भावपूर्ण चित्रों के द्वारा प्रभाव की सृष्टि हुई है। जहाँ तक कथानक का सम्बन्ध है इन पृथक पृथक चित्रों का परस्पर कोई सम्बन्ध नहीं है। इतना होते हुए भी समष्टि रूप से उनमें प्रायः एक ही सत्य की व्यन्जना हुई है।

आपने दो-एक वातावरण-प्रधान कहानियाँ भी लिखी हैं। 'डाकू' ऐसी कहानियों का सर्वश्रेष्ठ उदाहरण है। पत्रों में लिखी गई कहानी 'एक सप्ताह' प्रयोगशीलता और कलात्मक स्वरूप के कारण उल्लेखनीय है।

कमलाकान्त वर्मा

कल्पनापूर्ण कहानियाँ लिखने में वर्मा जी को विशेष सफलता मिली है। इन कहानियों का कला-रूप वर्त्तमान कविता के संबोध-गीत (odes) के कला—रूप से मिलता जुलता है जिसमें लेखक का दृष्टि-कोण बाह्य न होकर आध्यन्तरिक होता है। लेखक 'खंडहर' 'तकली' और 'पगडंडी' इत्यादि को मानव बुद्धि और चेतन से संयुक्त कर देता है और वे अपना अतीत इतिहास सुनाते हैं। अपने जीवन में साथियों के साथ 'मान-अभिमान' और प्रेम-कलह इत्यादि सभी का वर्णन करते हैं। कविता में स्थूल के प्रति सूक्ष्म का विद्रोह जिसे कहा गया है वर्मा जी की कहानियों में भी हमें उसी का आभास मिलता है।

यद्यपि ये कहानियाँ व्यक्तिगत निबन्ध की सीमा के अधिक निकट हैं परन्तु परिवर्तन-स्थल, चरम-बिन्दु एवं चरित्र चित्रण के तत्व रहने से कहानी की सरसता बनी रहती है।

पात्रों का चरित्राङ्कन सुन्दर और कथोपकथन भावपूर्ण है। शक्ति सम्पन्न भाषा गतिशील हो लक्ष्य तक पहुँचती है।

उसने कहा था

गुलेरी जी का कहानी-साहित्य केवल तीन कहानियों 'सुखमय-जीवन' 'बुद्ध का कांटा' और 'उसने कहा था' से निर्मित है। बस केवल ये ही तीन कहानियाँ अपनी कलात्मक श्रेष्ठताक के कारण गुलेरी जी को विकास-युग का प्रथम चरण सिद्ध कर गईं।

आचार्य शुक्ल जी के कथनानुसार 'उसने कहा था' हिन्दी-साहित्य की सर्वश्रेष्ठ कहानी है—"इसमें पक्के यथार्थवाद के बीच सुरुचि की चरम मर्यादा के भीतर भावुकता का चरम उत्कर्ष अत्यन्त निपुणता के साथ सम्पुटित है। घटना इसकी ऐसी है, जैसी बराबर हुआ करती है, पर इसके भीतर से प्रेम का एक स्वर्गीय रूप झांक रहा है—केवल झाँक रहा है, निर्लज्जता के साथ पुकार या कराह नहीं रहा है। कहानी भर में कहीं प्रेम की निर्लज्ज प्रगल्भता, वेदना की वीभत्स विवृत्ति नहीं है। सुरुचि के सुकुमार से सुकुमार स्वरूप पर कहीं आघात नहीं पहुंचता। इसकी घटनाएँ ही बोल रही हैं, पात्रों को बोलने की अपेक्षा नहीं।"

इसका कथानक इस प्रकार है—अमृतसर के बाजार में एक बालक और बालिका कभी कभी आपस में मिल जाते हैं। स्वाभाविक आकर्षण से बालक उस बालक पर ममताशील हो जाता है और एक दिन जान पर खेलकर उसकी प्राण-रक्षा करता है। बातें करते हुए जब लड़का उससे पूछता है—'तेरी कुड़माई हो गई' तो वह 'धत्' कहकर भाग जाती है। एक दिन उसे अप्रत्याशित उत्तर मिलता है—'हाँ हो गई'। वह मर्माहत हो उठता है और सारी कसर खोमचेवाले और कुत्ते पर

निकालता और उनसे उलझता हुआ घर पहुँचता है। वर्षों बीत जाते हैं, अब लहनासिंह फौज में जमादार है और लड़ाई पर जाने से पूर्व उसे सूबेदार का खत मिलता है कि वह भी साथ चलेगा। लहनासिंह उसके गाँव जाता है, सूबेदारनी उसके बचपन की वही साथिन है। ममता का स्रोत एक बार पुनः दोनों के हृदय में उमड़ उठता है। वह लहना पर विश्वास रखती है और अपने पति तथा पुत्र को युद्ध-क्षेत्र में बचाने की भिक्षा माँगती है। लहनासिंह युद्ध-क्षेत्र में उसके बीमार पुत्र को अपने सारे गरम कपडे पहनाता है, उसके कार्य (Duty) को पूरा करता है और जर्मन लेफ्टिनेण्ट की जालसाजी से उसके प्राण बचाता है जिसमें उसे एक गोली लगती है, लेकिन वह सूबेदार हजारासिंह और बोधा को जब तक वहाँ से भेज नहीं देता, तब तक गिरता नहीं। सूबेदार के जाने के समय वह कहता है—"सुनिए तो, सूबेदारनी होराँ को चिट्ठी लिखो तो मेरा मत्था टेकना लिख देना और जब घर जाओ तो कह देना कि मुझसे जो उसने कहा था, वह मैंने कर दिया।" मृत्यु के कुछ समय पहले स्मृति बहुत साफ हो जाती है। जीवन की सम्पूर्ण घटनाएँ चल-चित्र की भाँति मानस-पट पर घूम जाती हैं और इसके पश्चात् उसकी इहलीला समाप्त हो जाती है।

गुलेरी जी ने कथानक-निर्माण में संयोग और घटनाओं के अतिरिक्त जीवन तथा कर्म-क्षेत्र का साधारण, वैयक्तिक तथा व्यापक रूप भी लिया है। प्रस्तुत कहानी में दो व्यक्तियों के प्रेम और कर्त्तव्य का क्षेत्र इतने विशाल और व्यापक ढंग से लिया गया कि इसमें एक ओर जीवन के पच्चीस वर्ष चित्रित हैं, दूसरी ओर भारत से फ्रान्स की भूमि तक इसका चित्र पृष्ठ (कैनवास) फैला हुआ है, अतएव कहानी का कथानक इतिवृत्तात्मक और लम्बा भी हो गया है। लेकिन इसमें वर्णनात्मकता का सहारा कम लिया गया है और विविध भाव चित्रों और चिन्तन-शैली को इसमें स्थान मिला है।

कहानी के प्रारम्भिक अंश पर प्रकाश डालने के उपरान्त लेखक ने पच्चीस वर्षों का स्थल रिक्त छोड़ दिया है किन्तु नायक की मृत्यु के कुछ समय पहले उसके स्मृति पट उसे लाकर उसने अपनी कला को अत्यन्त चमत्कृत करने का सफल प्रयास किया है। इस प्रकार अन्त में कहानी की मनोवैज्ञानिक परिणति होती है जो कि उस युग की हिन्दी-कहानी के लिए एक गौरव की बात थी।

इस कहानी में कहानी-कला के वे सभी तत्व उपलब्ध होते हैं जो एक उत्कृष्ट कहानी के लिए आवश्यक हैं। कहानी का आरम्भ आकर्षक है और अमृतसर की सड़कों का दृश्य आंखों के सामने उपस्थित हो जाता है। प्रसाद गुण सम्पन्न, स्पष्ट और सरल भाषा ने वातावरण को चित्रित करने में पूरी सहायता दी है।

वर्णन में स्वाभाविकता है और घटनाओं में संगठन। कहानी का सबसे प्रभावशाली और मर्मस्पर्शी अंश उसका अन्तिम भाग है। मरणासन्न लहनासिंह की स्मृति बहुत साफ हो गई है, वह गत जीवन के एक एक चित्र का वर्णन करता जाता है और श्रोता या पाठक की आँखें भीगती जाती हैं। वह सोचने लगता है—क्या यह सन्निपात का आवेश है या वर्षों से दमित-शमित भावों का उपसंहार जो बाहर निकल कर चिर शान्ति की कामना कर रहा है।

लहनासिंह और लेफ्टिनेण्ट के संवाद में मनोविज्ञान का पूरा उपयोग किया गया है। घटनाओं का सामंजस्य वातावरण की सृष्टि, दृश्य-चित्रण, चातुर्य से भरे संवाद, भाषा की सरलता, मुहावरों का प्रयोग और मनोवैज्ञानिक तथ्यों का प्रकाशन, वे विशेषताएँ हैं जिनके कारण यह कहानी अमर बनकर गुलेरी जी को भी अमर कर गई है।

भाषा एवं शैली की दृष्टि से भी यह कहानी अनूठी है। कोई कोई वाक्य तो इतने सुन्दर हो गए हैं कि वे अनायास ही मुहावरे हो जाते

हैं, जैसे—'यह बात नहीं कि उनकी जीभ चलती ही नहीं, चलती है, पर मीठी छुरी की तरह मार करती हुई।' 'सामने नहाकर आती हुई वैष्णवी से टकराकर अन्धे की उपाधि पाई।' कहानी में सर्वत्र पात्र और परिस्थिति के अनुकूल भाषा का प्रयोग हुआ है और इस प्रयोग से वर्णनों में सर्वत्र जीवन आ गया है। भाषा और वर्णन के अनुरूप कहानी में कथोपकथन की भी सुन्दर सृष्टि हुई है।

इस कहानी में गुलेरी जी ने लहनासिंह की वीरता तथा सहृदयता का जैसा मार्मिक चित्र खीचा है वह वैसा अन्यत्र दुर्लभ है। उसकी सेवा, उसका उत्सर्ग दोनों अपूर्व है। बचपन का अशान्त स्नेह ही आज प्रौढ़ावस्था में प्रशान्त बलिदान बन गया है। शैशव की उत्सुक चंचल वृत्ति ही आज वयस्क आयु में गम्भीरतम कर्त्तव्य-निष्ठा के प्रतिमूर्ति हो गई है।

लहनासिंह का चरित्र एक आदर्श प्रेमी के रूप में अंकित किया गया है। हृदय के आन्तरतम प्रदेश से बहती हुई स्नेह-सरिता का एक बूँद जल भी वासना के पक से आविल नहीं है। वह बात का धनी है और प्रेम के लिए शारीरिक कष्टों की परवाह न करते हुए आत्म बलिदान करता है। वस्तुतः लहनासिंह के इस तरह के आदर्शमय महान चरित्र की अवतारणा तथा इसमें परम मानवीय व्यक्तित्व की प्रतिष्ठा के ही कारण यह कहानी हिन्दी-साहित्य की सर्वश्रेष्ठ कहानियों में गिनी जाती है। इसमें चरित्र-विकास, चरित्र-विश्लेषण तथा व्यक्तित्व-प्रतिष्ठा तीनों पूर्ण कलात्मक ढग से चरितार्थ हुए हैं।

इन सब गुणों के होते हुए भी प्रस्तुत कहानी का प्रमुख आकर्षण तो रस ही है। यह रस उथली रसिकता या मानसिक विलासिता का तरल द्रव नहीं है, जीवन के गम्भीर और स्वस्थ उपभोग में से खीचा हुआ गाढ़ा रस है। उसमें एक बलिष्ठ व्यक्तित्व का वजन है। कहानी

का आरम्भ चंचल-मधुर है। पर अन्त में तो जैसे सारी कहानी रस में डूब जाती है। शैशव की उस मीठी घटना से माधुर्य और लहनासिंह के पुरुषार्थी व्यक्तित्व से शक्ति प्राप्त कर अन्त में उसके बलिदान की करुणा कितनी गम्भीर हो जाती है! रति, हास, ओज और कारुण्य—इनके मिश्रण से रस का जो परिपाक होता है वह अत्यन्त ही प्रगाढ़ और पुष्ट है और यह रस-सिंचन घटनाओं और परिस्थितियों में ही नहीं है, वर्णनों में भी स्थान-स्थान पर इसकी रसीली मुस्कराहट मिलती है।

गुलेरी जी की यह कहानी अनुभूति के धरातल से नहीं अपितु लक्ष्य के धरातल से लिखी गई है। इसकी सृष्टि तथा निर्माण में आदर्श लक्ष्य सबसे बड़ी प्रेरणा थी और अनुभूतियां इसमें साधन-तत्व के रूप में आई हैं, प्रेरणा-तत्व में नहीं। पर साथ ही यह कहानी लक्ष्यात्मक होते हुए भी अनुभूतियों से ओत-प्रोत है। व्यक्ति समाज और वर्ग तीनों का सुन्दरतम उदाहरण इस कहानी में मिलता है। क्योंकि नगेन्द्र जी के शब्दों में जीवन के प्रति गुलेरी जी का दृष्टिकोण सर्वथा स्वस्थ है। उनके साहित्य का आधार छायानुभूतियाँ नहीं, जीवन की मांसल अनुभूतियां है।

चयन

(१) आचार्य रामचन्द्र शुक्ल—

इसमें पक्के यथार्थवाद के बीच सुरुचि की चरम मर्यादा के भीतर भावुकता का चरम उत्कर्ष अत्यन्त निपुणता के साथ सम्पुटित है।

घटना इसकी ऐसी है, जैसी बराबर हुआ करती है, पर उसके भीतर से प्रेम का एक स्वर्गीय रूप झांक रहा है—केवल झांक रहा है, निर्लज्जता के साथ पुकार या कराह नहीं रहा है। कहानी भर में कहीं प्रेम की निर्लज्ज प्रगल्भता, वेदना की वीभत्स विवृत्ति नही है। सुरुचि के सुकुमार से सुकुमार स्वरूप पर कहीं आघात नहीं पहुँचता। इसकी घटनाएँ ही बोल रही हैं, पात्रों के बोलने की अपेक्षा नहीं।

(२) डा० नगेन्द्र—

'सुखमय जीवन' में गुलेरी जी की कहानी-कला का शैशव है, 'बुद्धू का काँटा' में किशोरावस्था और 'उसने कहा था' में आकर वह पूर्ण पोषिता हो गई है। चूँकि वह समय से पूर्व पूर्णत्व को प्राप्त हो गई थी, इसलिए शायद उसकी अकाल मृत्यु हो गई। बहुत होनहार बालक अधिक दिन नहीं जीवित रहते।

(३) शिवदानसिंह चौहान—

'उसने कहा था' उनकी अन्तिम और सर्वश्रेष्ठ कहानी है। पहले महायुद्ध से सम्बन्धित सैनिक लहनासिंह की यह करुणा मिश्रित कहानी एक साथ ही कथा-विन्यास, विचार-वस्तु, रचना तंत्र, भाषा और शैली सभी दृष्टियों से सजीव रचना है। आश्चर्य होता है कि हिन्दी-कहानी के प्रारम्भ में ही, जब आचार्य द्विवेदी अभी खड़ी बोली का साहित्यिक रूप स्थिर करने के भगीरथ प्रयत्न में संलग्न थे, गुलेरी जी ने भाषा का यह प्रौढ़ रूप किस तरह निखार लिया।

(४) श्री गुलाब राय—

गुलेरी जी की इस कहानी ने बड़ी प्रसिद्धि पाई है। इसके कई

कारण हैं। उनमें से एक उसका मनोवैज्ञानिक सत्य भी है—वह है बात का निबाहना और ऐसे व्यक्ति की बात का जिसने मन पर बाल्य-काल में ही प्रभाव डाला हो। लहनासिंह अपने अन्तिम क्षणों में बार-बार भजन की टेक की भाँति यही दुहराता है 'वजीरासिंह पानी पिला—उसने कहा था' यही टेक कहानी का शीर्षक और उसकी जान है। अन्तिम क्षणों में स्मृति भी कुछ तीव्र हो जाती है। लहनासिंह पिछली सारी घटनाओं को दुहरा देता है और उसके बलिदान का रहस्य खुल जाता है।

(५) श्री विनय मोहन शर्मा—

'हाँ, तो...तो...फिर...' का औत्सुक्य कहानी का स्पन्दन है। इसीसे उसकी आयु बढ़ती है। यदि यह नहीं है तो कहानी कहाँ है ? गुलेरी जी की 'उसने कहा था' में इसी की प्रबलता है और तभी वह कहानी है। वह आदि से अन्त तक कुतूहल से हमें झकझोरती रहती है। उसमें प्रेम का उत्सर्गमय सात्विक आदर्श कितना स्पृहणीय और लुभावना है। अजाने ही वह हमारे हृदय को छू लेता है। उसका कथानक अनूठा, चरित्र-चित्रण प्रकृत, सवाद चुटीले और भाषा प्रसंगानुकूल, मुहावरेदार और प्रवाहमयी है।

(६) श्री रायकृष्ण दास—

गुलेरी जी की यह अमर कहानी हमारी यथार्थवादी कहानियों में आज भी उसी प्रकार अद्वितीय है जैसी १९१५ ई० में अपने प्रकाशन के समय थी, यद्यपि इस बीच हमारा कहानी-वाङ्मय यथेष्ट समृद्ध हो चुका है। इसका स्थान ससार की श्रेष्ठ कहानियों में है। भाषा-विधान,

कथानक और अभिव्यक्ति कहानी के इन चारों ही मुख्य अंगो में यह कहानी पूर्णतः सम्पन्न है।

(७) श्री नन्ददुलारे वाजपेयी—

गुलेरी जी की 'उसने कहा था' कहानी बहुत अधिक स्थान और समय घेरती है और कहानी के नवीन प्रतिमानों को देखते हुए विराट् या महाकथा (Epic story) कही जा सकती है।

आकाश दीप

'प्रसाद' जी की 'आकाश दीप' कहानी पूर्ण रूप से भावनात्मक है। यह कहानी प्रेम के प्रसग के साथ आई है। लेकिन यहाँ प्रेम का धरातल अपनी पूर्ण विशालता और गम्भीरता के साथ है। सक्षेप में इसका कथानक इस प्रकार है—

चम्पा एक क्षत्रिय बालिका है। उसके पिता वणिक मणिभद्र के यहाँ प्रहरी का काम करते थे। जलदस्यु बुद्धगुप्त ने जब आक्रमण किया तब चम्पा के पिता ने ही सात दस्युओं को मारकर जल-समाधि ली। वणिक मणिभद्र की पाप वासना ने चम्पा को बन्दी बनाया।

बुद्धगुप्त एक क्षत्रिय था। पर दुर्भाग्य से जल-दस्यु बन कर जीवन बिता रहा था। बन्दी की अवस्था में बन्दिनी चम्पा से उसकी भेंट हुई, दोनों कौशल से स्वतन्त्र हो गए।

चम्पा के संसर्ग में आनेपर बुद्धगुप्त का पत्थर सा हृदय एक दिन सहसा द्रवित हुआ। माया-ममता और स्नेह-सेवा की देवी चम्पा भी जलदस्यु को प्यार करने लगती है। इसके साथ ही वह बुद्धगुप्त से घृणा भी करती है क्योंकि वह समझती है कि वही उसके वीर पिता की मृत्यु का निष्ठुर कारण है।

बुद्धगुप्त कहता है—'मैं तुम्हारे पिता का घातक नहीं हूँ चम्पा। वह एक दस्यु के शस्त्र से मरे।' कम्पित स्वर में चम्पा बोली—'यदि मैं इसका विश्वास कर सकती! बुद्धगुप्त! वह दिन कितना सुन्दर होता, वह क्षण कितना स्पृहणीय!'

बुद्धगुप्त अनुभव करता है कि वह चम्पा के पास रहकर अपने हृदय पर अधिकार न रख सकेगा। इसलिए वह भारतवर्ष लौट जाता है।

प्रसाद जी अपनी कहानी का अन्त प्रायः वही कर देते हैं जहाँ मनोवैज्ञानिक दृष्टि से घटनाओ का चित्र पूर्ण हो जाता है, किन्तु 'आकाशदीप' में ऐसा नही हुआ वै। इस कहानी का अन्त वहाँ पर होता है, जहाँ चम्पा अपने दीप-स्तम्भ पर से बुद्धगुप्त की नावों का उपकूल छोड़कर समुद्र की ओर जाते देखती है।

कथानक में अपेक्षाकृत बड़ी सम्वेदनाएँ अपने कई प्रसंगो के साथ गुथी हुई आई हैं। फिर भी कथानक की सबसे बड़ी विशेषता इसमें है कि इसमें भाव की इकाई और एकसूत्रता सर्वत्र है। 'आकाश-दीप' की मुख्य इकाई है प्रेम और कर्तव्य का संघर्ष और इसी संघर्ष में इस कहानी की एकसूत्रता भी है तथा इसी के किनारे-किनारे जितने प्रसंग आए हैं, वे संकेत और व्यंजना के माध्यम से हमारे सामने प्रकट हुए हैं।

कथानक की इकाई और एकसूत्रता इतनी बलवती और कलात्मक हुई है कि कहानी के आरम्भ से ही पाठक की जिज्ञासा-वृत्ति पर कहानी की सम्वेदना पूर्ण अधिकार प्राप्त कर अन्त तक पाठक को कौतूहल से अभिभूत किए रहती है। पाठक कहानी के अन्त पर पहुँच कर भी उस इकाई से मुक्त नहीं हो पाता प्रत्युत उसके सामने एक नई समस्या आ जाती है और वह स्वयं उसके सुलझाने में लग जाता है।

इसीलिए प्रेमचन्द जी ने कहा था कि—'प्रसाद' जी की कहानियों का अन्त 'अपने ढग का निराला होता है······बड़ा ही भावपूर्ण, ध्वन्यात्मक और सहसा...पाठक का मन झकझोर उठता है...वह एक समस्या को पुनः सुलझाने लगता है।'

ऐसे कथानक का अन्यतम सौन्दर्य इसमें है कि एक लंबी सी सम्वेदना और कथा-सूत्र को एक छोटे से इतिवृत्त में समेट देना, तथा उसमें भी

कौतूहल का चमत्कार उत्पन्न करते रहना। 'आकाश दीप' के कथानक-निर्माण में 'प्रसाद' जी ने बिल्कुल नए कथानक-तंत्र की सहायता ली है। इस तंत्र-निर्माण में नाटकीयता, वर्णनात्मकता, व्यंजना और सन्दर्भ की सामूहिक सहायता ली गई है।

कहानी के इस तन्त्र (Technique) के साथ 'प्रसाद' जी ने एक और विशेषता रखी है। वह विशेषता ध्वन्यात्मक शैली का ही एक पूर्ण विकसित रूप है। कहानी के आरम्भ से ही कही यह लगता है कि कहानीकार इन पात्रों को अपने भावों की भाषा बनाकर जो कह रहा है वह तो निमित्त मात्र है, वह जो कुछ कहना चाहता है वह तो कुछ और ही है—तब कहानी रूपक-सी हो जाती है। 'आकाशदीप' में यह रूपक (Allegory) बहुत ही पूर्णता के साथ है। वहाँ इन्द्रियाँ दस्यु हैं, मन और बुद्धि बन्दी हो रहे हैं। इसी प्रकार सम्पूर्ण कहानी आध्यात्मिक मनोविज्ञान की व्याख्या कर देती है। कहानीकार ने इस ध्वन्यात्मक अर्थ का इतनी सफलता से कहानी में निर्वाह किया है कि साधारणतः यह विश्वास नहीं किया जा सकता कि 'आकाशदीप' रूपक है। हम तो कहानी को समझते हैं और उसका मूर्त्त रूप ही हमें यथार्थ विदित होता है।

इन सब तत्वों के कारण जहाँ यह सच है कि कहानी कहानी की भाँति हमारे समक्ष आती है, वहाँ यह भी सच है कि एक गूँज सी और एक हूक-सी बड़ी प्रबलता से हमें स्पन्दित कर देती है। कहानी अन्तिम स्थिति में पहुँचकर जैसे किसी रहस्य में परिणति पा लेती है। इससे एक रहस्यवादी प्रत्यय कहानी में लग जाता है। यह प्रत्यय ही बहुतों को भ्रम में डाल देता है और 'प्रसाद' जी के यथार्थ लोक को अलौकिकता का आवरण पहना देता है।

कवित्वपूर्ण वातावरण के भीतर प्रेम की विभिन्न भावनाओं का चित्रण प्रसाद जी की कहानियों में अधिक हुआ है। प्रेम की सफलता

में बाधक बन कर आनेवाली परिस्थितियाँ समाज या बाह्य-जगत की न हो कर भावना-जगत् की ही होती हैं। 'आकाशदीप' के संघर्ष का प्रधान विषय प्रेम और पिता की स्मृति ही है। यह संघर्ष चम्पा को एक असफल प्रेमी बना देता है। प्रेम के कारण ही वह बुद्धगुप्त से प्रतिशोध लेने का विचार छोड़ देती है। परन्तु पिता की मृत्यु के कारण उसका प्रणय भी अस्वीकार करती है। 'आकाशदीप' में चरित्र अपने भाव-जगत् अपनी आन्तरिकता में अधिकाधिक एक दूसरे के समीप और अन्तर्द्वन्द्वों से अभिभूत हैं। उनकी बाह्य क्रियाशीलता उनके आन्तरिक अन्तर्द्वन्द्वों की अपेक्षा बहुत सीमित है।

कलात्मक दृष्टि से 'आकाशदीप' में कथोपकथन का मूल्य अत्यधिक है, क्योंकि कहानी इसी के माध्यम से विकसित की गई है, यही कारण है कि कहानी में लम्बे-लम्बे कथोपकथन आ गए हैं। कहानी की मुख्य सम्वेदना वर्णनों या चित्रणों के माध्यम से अभिव्यक्ति न पाकर सर्वथा कथोपकथनों के माध्यम से ही निर्मित हुई है। कहानीकार ने 'आकाश दीप' का प्रारम्भ भी वार्त्तालाप से किया है। ऐसे आरम्भ में कौतूहल वृत्ति की प्रतिष्ठा सबसे प्रमुख विशेषता के रूप में आती है; दूसरे ऐसे आरम्भ में समस्या और द्वन्द की प्रतिष्ठापना हो जाती है। वास्तव में यह कौशल नाटक लिखनेवालों का है और 'प्रसाद' एक सफल नाटक-कार थे। इस नाटकीय शैली से कहानी में प्रवाह चित्रात्मकता और व्यजना तो आ ही जाती है, इसके अतिरिक्त कहानी में गठन, चमत्कृति और स्वाभाविकता बनी रहती है।

'आकाशदीप' में भाव और भाषा दोनों का रूप इन्द्रधनुषी हो गया है। जो चीज हृदय को छू लेती है, जो चीज हमें बार-बार कहानी पढ़ने को बाध्य करती है वह है उसका काव्य-रस। इस काव्य-रस को कहानी के रस के साथ गुंफित करने वाली 'प्रसाद' की भाषा-शैली अपूर्व है। एक उदाहरण पर्याप्त होगा—

'सामने शैल-माला की चोटी पर हरियाली में विस्तृत जल-देश में, नील पिंगल सन्ध्या, प्रकृति की एक सहृदय कल्पना, विश्राम की शीतल छाया, स्वप्न-लोक का सृजन करने लगी। उस मोहिनी के रहस्यपूर्ण जल का कुहुक स्फुट हो उठा। जैसे, मदिरा से सारा अन्तरिक्ष सिक्त हो गया। सृष्टि नील कमलों से भर उठी। उस सौरभ से पागल चम्पा ने बुद्धगुप्त के दोनो हाथ पकड़ लिए वहाँ एक आलिंगन हुआ जैसे क्षितिज में आकाश और सिन्धु का। किन्तु उस परिरम्भ से सहसा चैतन्य होकर चम्पा ने अपनी कंचुकी से एक कृपाण निकाला।'

उपर्युक्त गद्यांश में रस—स्निग्ध भाषा अपने स्वाभाविक और सरल रूप में प्रयुक्त हुई है। इसमें कलात्मक संयम और शैली की सजीवता का अद्भुत सामञ्जस्य है।

'आकाशदीप' की सृष्टि नारी-चरित्र की महानता और उसकी आत्मा के कारुणिक धरातल पर हुई है। कहानी की चरमसीमा मनोवैज्ञानिक अनुभूति और मनोभावों के उत्कर्ष पर प्रतिष्ठित हुई है। यह कहानी प्रसादान्त है क्योंकि जब यह समाप्त होती है तब न तो वहाँ सुख की प्रधानता रहती है और न दुःख की। बुद्धगुप्त तथा चम्पा का अन्त तक विवाह न हो सका, इसलिए यह नायक-नायिका के पक्ष में सुखान्त नहीं और दोनों ने प्रेम का सुखोपभोग भी दो क्षण के लिए किया और उनका वियोग इच्छानुरूप ही हुआ इसलिए इसे दुखान्त भी नहीं कहा जा सकता। कहानी के अन्त में प्रसाद ने उक्त द्वीप-निवासियों द्वारा पूजा का अर्घ्य दिलाकर अपने नाम को सार्थक कर दिखाया है।

चयन

(१) श्री विनोद शङ्कर व्यास—

'आकाशदीप' की विविध घटनाओं में समय का दीर्घ न्अतर है। इस से कहानी का प्रभाव बिखरा हुआ प्रतीत होता है। चरित्र का विकास अधिकांशतः साकेतिक रूप में हुआ है।

(२) डा० श्रीकृष्ण लाल—

'प्रसाद' की कहानी 'आकाशदीप' वातावरण प्रधान कहानी की कला का सर्वोत्तम उदाहरण है।

(३) श्री रायकृष्णदास—

'प्रसाद' जी की कहानियों में ऐसे भिन्न-भिन्न स्वाद हैं कि कैसे एक-दूसरे की तुलना की जाय। 'बिसाती' 'स्वर्ग के खंडहर में', 'आँधी' 'सालवती', 'जाकाशदीप' तथा 'गुण्डा' ऐसी कहानियाँ हैं जिनके शीर्षक मुझे सदैव याद रहते हैं। ऊपर जिन कहानियों का नाम मैंने लिखा है उनमें मुझे 'आकाशदीव' के प्रति विशेष आकर्षण है। नारी-हृदय का जैसा सुन्दर चित्रण इसमें हुजा है, अन्यत्र दुर्लभ है।

(४) डा० लक्ष्मी नारायण लाल—

'आकाशदीप' कहानी मुख्य रूप से सम्वेदनात्मक कहानी है, यहा परिस्थितियाँ गौण हैं और सम्वेदना की तीव्रता सबसे अधिक है। सम्वेदनाएँ मुख्य रूप से प्रेम के केन्द्र-बिन्दु के चारो ओर फैली हुई हैं।

(५) प्रो० केसरी कुमार—

'आकाशदीप' शीर्षक कहानी 'आकाशदीप' संग्रह की सर्वोत्कृष्ट रचना है।

पुरस्कार

'पुरस्कार' में कोशल के सेनापति सिंह मित्र की कन्या मधूलिका और मगध के राजकुमार अरुण की प्रेम-कहानी है। मधूलिका के हृदय में प्रेम और राजभक्ति का द्वन्द चलता है। वह अरुण कुमार से प्रेम करती है जो मगध का विद्रोही राजकुमार है और जिसके सामने लाल-साओं तथा आकांक्षाओं का चित्र है। अरुण मधूलिका से कहता है—'मैं तुम्हें कोशल के सिंहासन पर बिठाकर अपनी राजरानी बनाऊँगा।' मधूलिका काँप उठती है। वह अरुण के षड्यन्त्र में सम्मिलित हो जाती है। अरुण के कहने से वह महाराज से दक्षिण नाले के आस-पास की वन-भूमि माँग लेती है, परन्तु जब अरुण के सैनिक दुर्ग की ओर बढ़ते हैं तो उसका मन पश्चात्ताप से भर जाता है। वह सोचती है, श्रावस्ती दुर्ग एक विदेशी के हाथ में चला जायगा। मगध कोशल का चिर-शत्रु···मगध की विजय···सिंहमित्र कोशल-राज्य का रक्षक वीर, उसकी कन्या आज क्या करने जा रही है। 'मधूलिका' मधूलिका !'—उसे लगा जैसे उसके पिता उस अन्धकार में पुकार रहे हैं, वह कोशल-नरेश से सारा षड्यन्त्र बता देती है। उसका प्रेमी अरुण पकड़ लिया जाता है। उसे प्राण-दण्ड की आज्ञा होती है। कोशल-नरेश समोद मधूलिका से कहते हैं—'तुझको जो पुरस्कार माँगना हो माँग'। मधूलिका पगली सी कहती है, 'मुझे कुछ न चाहिए' 'राजा कहते हैं—नहीं ! मैं तुझे अवश्य दूँगा, माँग ले।'

'तो, मुझे प्राणदण्ड मिले।' कहती हुई वह बन्दी अरुण के पास जाकर खड़ी हुई।

मनुष्य का मान—अभिमान, स्नेह-प्यार, ईर्ष्या, द्वेष, छल, कपट, घृणा-ग्लानि, वैर-विरोध कब क्या रूप लेते हैं, उनमें कब क्या-क्या परिवर्तन होते हैं, यह वास्तव में अद्भुत है। मधूलिका का वह गर्व और अभिमान भरा त्याग, प्रेम के पीछे उसका वह विश्वासघात, फिर अपने प्रेमी के षड्यन्त्र का भण्डाफोड कर उसे बन्दी बनवाना और अन्त में उसके पुरस्कार-स्वरूप मृत्यु माँगना सभी अद्भुत है।

कहानी के कथानक में अनेक प्रकार की कल्पना-रंजित सूक्ष्म रेखाएँ उभर उठी हैं, फिर भी उसमें भावो का तारतम्य और एक-सूत्रता सर्वत्र स्पष्ट है। कथानक के आरम्भ, विकास और अन्त तीनों भागों में घटनाओं की अवतारणा प्रसाद की कला की मूल विशेषता है; घटना की अवतारणा से कथानक का आरम्भ होता है और इसके क्रमिक विकास के साथ सम्पूर्ण कथानक विकसित होता है। घटनाओं में आरम्भ ही से कौतूहल और जिज्ञासा वृत्ति का संगुम्फन प्रसाद जी की सबसे बड़ी विशेषता है। घटनाओं में पूर्व-कथा, पूर्व-सूत्र और भूमिका आदि बिल्कुल छिपा दी जाती है और कथानक का आरम्भ सहसा बहुत विकसित रूप में होता है।

'पुरस्कार' में कथानक बहुत लम्बा और अनेकानेक मोड़ों के साथ निर्मित हुआ है। कथा-सूत्र विभिन्न रेखाओं में फैलकर समूचे युग का दर्पण बन गया है। परन्तु यहाँ इतिवृत्तात्मकता में प्रासंगिकता अधिक प्रधान है, कथा की पूर्णता नहीं। यही कारण है कि यह कहानी इतने लम्बे कथासूत्र के रहते हुए भी आकर्षक और कलात्मक है क्योंकि इसके विकास में कौतूहल और जिज्ञासा के बीच बहुत कलात्मक ढंग से कथा-सूत्र पिरोया गया है।

इस कहानी की दो विशेषताएँ स्पष्ट दिखाई पड़ती हैं। विषय एवं प्रसंग की स्थापना और चित्रण करने के पूर्व उनकी प्रकृति के

अनुरूप सारी साज-सज्जा एकत्र कर देना ऐसी विशेषता है जो 'प्रसाद' की कहानियों में सर्वत्र पाई जाती है। अपनी कृतियों में सजीवता पिरोने के लिए वे इस पक्ष को बड़ी तत्परता से उपस्थित करते हैं। भारतीय जीवन के अतीत सौन्दर्य का सूक्ष्म विवरण 'प्रसाद' को प्राप्त था, इसलिए उसकी झलक सर्वत्र मिलती है। दूसरी विशेषता कहानी के मूलभाव में दिखाई पडती है। दो विरोधी वृत्तियों के अन्तःसंघर्ष का कौशलपूर्ण अंकन करने में 'प्रसाद' जी को बड़ी सफलता मिली है।

मधूलिका के चरित्र की अवतारणा अन्तर्द्वन्द के धरातल पर हुई है। इसी अन्तर्द्वन्द के केन्द्र-बिन्दु से उसके चारो ओर प्रतिशोध, उत्सर्ग क्षमा, दया, प्रेम, बलिदान और सहनशीलता की रेखाएँ बिछी हुई हैं। राजकुमार अरुण मधूलिका का प्रकाश है, उसका पुरस्कार है, फलतः उसकी कर्मशीलता, चारित्रिक दृढ़ता और सम्वेदनशीलता अपूर्व है।

कहानी के लक्ष्य-बिन्दु पर करुणा, त्याग और बलिदान की भावनाएँ अपूर्व ढंग से व्यक्त हुई हैं—कहानी ऐसी कारुणिक सम्वेदना को लेकर लिखी गई है कि वह अपने लक्ष्य-बिन्दु पर न जाने कितने करुण उत्सर्ग की सुगन्धि बिखेर देती है। 'प्रसाद' जी ने करुण उत्सर्ग और त्याग को दिखाने के लिए बार बार इतिहास के कथा-सूत्र को ढूँढ निकाला है, और यदि इतिहास के पृष्ठों में उन्हें कोई उचित सम्वेदना नहीं मिल सकी है तो उन्होंने अपनी कल्पना में उन सम्वेद-नाओं की सृष्टि की जिनसे उनके लक्ष्य प्रतिष्ठित हो सकें। इस सम्बन्ध में 'प्रसाद' जी की सबसे बड़ी कला यह है कि उनकी ऐसी कहानियाँ मुख्यतः समस्या और अन्तर्द्वन्द प्रधान हो जाती हैं और समूची कहानी में एक मूक विद्रोह, चरित्र की महानता और उत्सर्ग की आवाज गूँजने लगती है। 'पुरस्कार' कहानी के निर्माण के पीछे करुणा, उत्सर्ग और नारी-

चरित्र की महानता का लक्ष्य-निन्दु है । कथा-सूत्र से चरित्र और चरित्र की कर्मशीलता तथा अन्तर्द्वन्द से संपूर्ण कहानी बन जाती है ।

फलतः यह कहानी समस्या-प्रधान कथा-सूत्र के होते हुए भी मूलतः अनुभूति प्रधान है—कहानी की सृष्टि का एकमात्र कारण 'प्रसाद' की तदविषयक अनुभूति ही है ।

चयन

(१) डा० रामरतन भटनागर—

मधूलिका का अन्तर्द्वन्द इस कहानी का प्राण है और इस अन्तर्द्वन्द को लेखक अत्यन्त सफलतापूर्वक अंकित करने में पूर्णतः सफल हुआ है ।

(२) डा० लक्ष्मी नारायण लाल—

'प्रसाद' के समस्त कहानी-साहित्य में उनके नारी-पात्र क्षमा, दया, प्रेम और उत्सर्ग की आदर्शमयी प्रतिभाएँ हैं, जो ससार के किसी भी कहानी-साहित्य में नहीं मिल सकतीं । 'आकाशदीप' की चम्पा, पुरस्कार की मधूलिका लोक-मंगल भावना से अभिभूत प्रेम की अमर देवियाँ हैं ।

(३) डा० जगन्नाथ प्रसाद शर्मा—

'आकाशदीप' और 'पुरस्कार' दोनों में मूल भाव प्रायः एक सा ही है—भले परिस्थिति तथा वातावरण में अन्तर हो। इन कहानियों में दो विशिष्ट प्रकार के ममत्वो का संघर्ष वर्णित है—प्रेम-अनुराग और कुल की मर्यादा का संरक्षण। कठोर विषमता के उपरान्त दोनों का क्रियागत और सामंजस्यपूर्ण पर्यवसान ही सौन्दर्य का कारण बन जाता है।

बूढ़ी काकी

प्रेमचन्द की 'बूढ़ी काकी' कहानी में बूढ़ी काकी की लोभी और लालची प्रवृत्ति का विशद चित्रण है। बुद्धिराम और उसकी स्त्री सारे गाँव को अच्छी वस्तुएँ खिलाते हैं, परन्तु बूढी काकी को कोई पूछता ही नहीं। इतना ही नहीं उसके माँगने पर उसका कई बार अपमान भी हुआ और दण्डस्वरूप उसे एक कोठरी में बन्द कर दिया गया। बूढ़ी काकी रात में अपनी भूख मिटाने के लिए जूठी पत्तलों पर ही टूट पड़ती है। बुधिराम की पत्नी रूपा इस दृश्य को देखकर काँप उठती है और बूढ़ी काकी को भर पेट पूड़ी और मिठाइयाँ खिलाती है। लोभ की प्रतिमूर्त्ति बूढ़ी काकी का चित्र इस कहानी में अपूर्व सौन्दर्य-सयुक्त है।

कथानक में गठन और संयम दोनों निश्चित हैं। कहानी में उतना ही कथानक लिया गया है जितने से कहानी की मूल सम्वेदना सम्बन्धित है। अतएव कहानो में विस्तृत व्यापार और घटना का अभाव है।

'बूढ़ी काकी' के कथानक में कुल पाँच मोड़ हैं, जैसे इसका आरंभ, जहाँ बूढ़ी काकी का परिचयात्मक अश कथानक के आदि में जुड़ा हुआ है। दूसरा मोड़ है, बुधिराम के बडे लडके सुखराम का तिलक-समारोह और इस अवसर पर प्रीति-भोज की व्याख्या। तीसरा मोड़ है भूखी बूढ़ी काकी का स्वतः भण्डारे में आ घुसना और उसकी उपेक्षा। चौथा मोड़ है, भूखी उपेक्षिता काकी का रात में मेहमानों की जूठी पत्तलें खाना और रूपा, घर की मालकिन का उसे देख लेना, तथा कथानक का पांचवा और अन्तिम मोड़ है, रूपा का सब सामग्रियों के साथ थाली सजाना और बूढ़ी काकी को खिलाना।

कथानक का आरम्भ कहानीकार द्वारा स्थिति-वर्णन और समस्या-उद्घाटन में होता है। कथानक समस्या लेकर आगे बढ़ता है, उसमें घात-प्रतिघातों, संघर्षों की चोटें लगती हैं और उनके फलस्वरूप कथानक तुरन्त अपनी स्वाभाविक चरम सीमा पर पहुँच जाता है अर्थात् कथानक अपने विकास और चरमसीमापर पहुँचने के लिए किसी भी प्रकार के आदर्श और सिद्धान्त को न मानते हुए पूर्ण स्वाभाविक यथार्थ गति से चरम सीमा पर पहुँच जाता है और उसमें किसी भी तरह का विस्तार, व्याख्या या अप्रासंगिक फैलाव नहीं रहता।

कहानी में चरित्र विश्लेषण आचरण के धरातल से नहीं हुआ है, बल्कि इसकी आधार-शिला है—व्यक्ति, व्यक्ति की दुर्बलताएँ और व्यक्ति की आन्तरिकता। हम यहाँ व्यक्ति के कृत्यों की ओर से उनके मनोभावों की ओर गए हैं। 'बूढ़ी काकी' में हमें बूढ़ी काकी का कोई भी क्रिया-कलाप नहीं याद रहता बल्कि हमें स्पष्ट रूप से बूढ़ी काकी के मनोभाव स्मृत रहते हैं। वह अकेले अपने कमरे में सोचती फिरती है—खूब लाल-लाल, फूली-फूली नरम पूड़ियाँ होंगी। रूपा ने भली भाँति मोयन दिया होगा। कचौरियों में अजवाइन और इलायची की महक आ रही होगी। एक पूरी मिलती तो जरा हाथ में लेकर देखती। क्यों न चलकर कड़ाह के पास सामने ही बैठूँ। पूड़ियाँ छन-छन कर तैरती होंगी। कड़ाह से गरम-गरम निकालकर थाल पर रक्खी जाती होंगी।'

यहाँ चरित्र की इस व्यवस्था में चरित्र-अवतारणा ने दो प्रभाव डाला है। पात्र की मानवीय पूर्णता प्रकट हो गई है। 'बूढ़ी काकी' में चरित्र की सृष्टि उसके आन्तरिक और बाह्य दोनों जगत् के मिलन-बिन्दु के धरातल पर हुई है। उसके चरित्र में उसका निजत्व स्थापित हुआ है अतः उसके चरित्र में हम अधिक सजीवता और मानवीय तत्व पाते हैं।

प्रस्तुत कहानी का धरातल मनोवैज्ञानिक अनुभूति है। 'बूढ़ी काकी' की प्रेरणा और भाव-भूमि में कहानीकार की अनुभूतियाँ स्पष्ट हैं। कहानी पूर्ण मनोवैज्ञानिक सत्य और यथार्थ पर टिकी है।

शिल्प-विधि की सफलता के फलस्वरूप, कहानी में रस-परिपाक अपूर्व ढंग से हुआ है। कहानी के संविधानात्मक सफलता और शिल्प-विधि का सौन्दर्य अपनी उत्कृष्टता पर है। कहानी में कथानक को केवल पृष्ठभूमि या साधन मात्र बनाने की सफल चेष्टा हुई है। यहाँ चरित्र, मनोभाव, कला तीनों की सफल संयोजना हुई है। कहानी में केन्द्र का तीखापन, लक्ष्य की प्रभविष्णुता और शैली का आकर्षण अपूर्व है।

चयन

(१) प्रो० प्रकाशचन्द्र गुप्त—

'बूढी काकी' में विनोद की झलक है, हृदय की व्यथा भी।

(२) डा० श्री कृष्णलाल—

'बूढी काकी' में लेखक वृद्धा की लोलुप प्रवृत्ति की एक-एक छोटी प्रतिक्रिया देना भी नहीं भूला है।

पूस की रात

'पूस की रात' किसानों की गरीबी की कहानी है। तीन रुपए जो कुल पूँजी शेष है, महाजन डाँटकर ले जाता है। अब किसान के पास कुछ नहीं रहा। पूस की रात है। वह खेत ताकने अपनी मड़ैया में जाता है। उसके साथ उसका कुत्ता जबरा है। दोनों ठिठुर रहे हैं। हल्कू ने जबरा के प्रति अपनी मौखिक सहानुभूति प्रकट की। जबरा ने पशु-भाषा में उसकी हमदर्दी स्वीकार की। अन्त में शीत से व्याकुल हो कर दोनों एक दूसरे से लिपट गए। इतने में अरहर के खेत से कुछ आवाज सुनाई दी। जबरा दौड़कर गया और भूँकता रहा, परन्तु विपक्षी दल अधिक सशक्त था। खेत का अधिकांश भाग चर गया। हल्कू की हिम्मत नहीं हुई कि उठकर उधर जाता। निराशा और अवशता चरम सीमा पर पहुँच चुकी थी। उसने खेत चर जाने दिया। दूसरे दिन सवेरे जब उसकी पत्नी आई और उसने देखा कि सारा खेत चर चुका था, तब उसने हल्कू को फटकारना चाहा, पर हल्कू को भीतर ही भीतर यह प्रसन्नता थी कि खेत चर गया, अच्छा ही हुआ, अब उसे पूस की रात में वहाँ सोना न पड़ेगा।

कहानी में हल्कू का रात में खेत पर जाना, जबरा से विनोद, शीत का अनुभव आदि सब 'समृद्धि' है। कहानीकार कहानी के लिए आवश्यक समस्त उपादानों को यहाँ तक उपस्थित कर देता है। साथ ही यह प्रश्न भी उपस्थित कर देगा कि अब क्या होगा? शीत की विकटता, पत्तों का जलाना, जबरा का भौंकना, नील गायों का खेत चरना, हल्कू का कभी ललकारना, कभी आलस-मग्न होना, कभी साहस करके उठना—ये समस्त परिस्थितियाँ तीव्र दुविधा की हैं।

और यहाँ विकास समाप्त हो लेता है। तभी कहानी चरम पर पहुँचती है। 'पूस की रात' में बड़ी दुविधा के उपरान्त हल्कू निश्चयात्मक हो गया—'जबरा अपना गाल फाडे डालता है। नीलगायें खेत का सफाया किए डालती थीं और हल्कू गर्म राख के पास शान्त बैठा हुआ था। अकर्मण्यता ने रस्सियों की भाँति उसे चारों ओर से जकड़ रखा था'—यही चरम है।

इसके बाद होता है 'संहार'। पूस की रात में हल्कू के खेत का संहार नीलगायें कर गईं। हल्कू निश्चिन्त सोता रहा। प्रातः उठा और प्रसन्नतापूर्वक यह कह कर 'रात की ठण्ड में यहाँ सोना तो न पड़ेगा' उसने कहानी के रहे बचे सूत्र का ही संहार कर दिया, कहानी समाप्त हो गई।

कहानी मनोविज्ञान की अनुभूति के धरातलपर खडी है। कहानी का कथानक बहुत छोटा और अपने आप में अत्यन्त गठित है—जैसे कोई मनोवैज्ञानिक बिन्दु ही कहानी भर में कथानक के नाम पर सूक्ष्म रेखा बन गई हो।

'पूस की रात' कहानी मनोवैज्ञानिक यथार्थ पर लिखी गई है। प्रेमचन्द को गरीबी, शोषण और पूस की रात की ठढक की अनुभूति थी। उन्होंने इसी अनुभूति की प्रेरणा से 'पूस की रात' के कथासूत्र को गढ़ा और उसमें उसी सच्ची अनुभूति को वाणी दे दी अथवा अनुभूति ही घनीभूत होकर कहानी की रेखाओं में अभिव्यक्त हो गई।

कहानी में न कोई बलवती घटना है न संयोग बल्कि यहाँ प्रेमचन्द ने मानववाद और मानवता के चिरन्तन संघर्षों और प्रतिक्रियाओं को कहानी में मुखरित किया है। यहाँ प्रेमचन्द की व्याख्या स्वयं सिद्ध हो जाती है, कहानी में कई रसों, कई चरित्रों और कई घटनाओं के लिए स्थान नहीं रहा। वह अब केवल एक आत्मा का, आत्मा की एक

झलक का सजीव स्पर्शी चित्रण है। गल्प का आधार अब घटना नहीं मनोविज्ञान की अनुभूति है और सबसे उत्तम कहानी वह होती है जिसका आधार किसी मनोवैज्ञानिक सत्य पर होता है।

कहानी अपनी शिल्प विधि में बहुत संयम और अत्यन्त गठन के साथ आई है तथा कला के, संयम में उसके सारे अंग एक दूसरे से तादात्म्य स्थापित करके एकात्म स्तर पर पहुँच गए हैं।

चयन

(१) डा० लक्ष्मी नारायण लाल—

यहाँ आकर प्रेमचन्द का यथार्थवादी दृष्टिकोण और भी स्पष्ट हो गया है। 'पूस की रात' में यथार्थ की प्रेरणा तीव्रतम हुई है।

(२) श्री गुलाब राय—

इसमें किसानों की कठिनाइयों की भी एक करुण व्यन्जना है। इसमें 'आँख फूटी पीर गई' की लोकोक्ति भी चरितार्थ होती है।

ताई

'कौशिक' की कहानी 'ताई' की सम्वेदना पारिवारिक धरातल से ली गई है। इसमें पति-पत्नी के दूसरे बच्चे के प्रति स्नेह-वात्सल्य की समस्या है। रामेश्वरी (ताई) अपने देवर के पुत्र मनोहर से घृणा करती है। क्योंकि उसी के स्नेह के पीछे उसके पति पुत्र-प्राप्ति के लिए कोई यत्न—तीर्थ-यात्रा, पूजा-पाठ, व्रत-उपवास आदि कुछ भी नहीं करते। बच्चों से उसे स्वाभाविक स्नेह है, परन्तु मनोहर की सूरत से उसे घृणा है। एक दिन मनोहर पतंग पकड़ने के लिए मुँडेर पर दौड़ता है और अचानक पैर फिसलने के कारण गिरने लगता है। वह सहायता के लिए ताई को पुकारता है और ताई यदि चाहती तो उसे बचा भी सकती थी, परन्तु उसने सहायता न की और बच्चा चीखता हुआ नीचे गिर पड़ा। मनोहर के नीचे गिरते ही ताई के हृदय में एक धक्का लगता है और वह बीमार हो जाती है। मनोहर जब अच्छा हो गया और रामेश्वरी के पास लाया गया तभी वह अच्छी हुई और उसके बाद से वह उसे प्यार करने लगी।

'ताई' कहानी की समस्या अपेक्षाकृत मनोवैज्ञानिक समस्या है। रामजीदास अपने भतीजे मनोहर को शिशुवत और पुत्रवत् प्यार देते हैं। उससे उनकी पत्नी रामेश्वरी को स्पर्द्धा होती है। यद्यपि वह भी अपने अवचेतन रूप में उसे मातृत्व और स्नेह की भावना देती रहती है परन्तु इसपर ईर्ष्या की भावना का एक स्थूल आवरण डाले रहती है। फलतः सम्पूर्ण कहानी में स्पर्द्धा और सहज स्नेह का अन्तर्द्वन्द्व होता रहता है। परन्तु शैली के सामान्य पक्ष में इस मनोवैज्ञानिक

अन्तर्द्वन्द्व की भी अभिव्यक्ति वर्णनों द्वारा हुई है अर्थात् कहानी के विकास और निर्माण के लिए सब कुछ कहानीकार को ही कहना पड़ा है। कहानी में आदर्श और यथार्थ का संघर्ष सफलता से व्यक्त हुआ है और कहानी के अन्त में आदर्शवाद की प्रतिष्ठा भी स्पष्ट है। अतएव यह कहानी एक ओर इतिवृत्तात्मक है और दूसरी ओर इसका विकास संयोगों और कार्यों के माध्यम से हुआ है। कहानी के विकास भाग और चरम-सीमा के उपरान्त भी सोद्देश्यता भूमिका और उपसंहार के रूप में बार-बार उभर आई है।

'ताई' कहानी चरित्र प्रधान है। पर ताई (रामेश्वरी) में अन्तर्द्वन्द्व की वह तीव्रता नही है अथवा स्वभाव की वह जटिलता नहीं मिलती जो जैनेन्द्र के पात्रों की विभूति हैं। 'कौशिक' जी के पात्र खुले हुए हैं और उनका मनोविज्ञान सीधा-सादा है। पात्र व्यक्ति न होकर टाइप हैं।

'कौशिक' जी की कहानियाँ एक निश्चित परिस्थिति से आरम्भ होती हैं और एक निश्चित परिस्थिति में समाप्त। 'ताई' कहानी का आरम्भ मनोहर के सम्भाषणों से होता है और उसका अन्त इन वाक्यों से—'और, मनोहर तो अब उनका प्राणधार हो गया है। उसके बिना उन्हें एक क्षण भी कल नहीं पड़ती।'

शिल्प की दृष्टि से एक और बात सामान्य रूप से 'कौशिक' जी की कहानियों में मिलती है और वह है पीछे मुड़कर देखने की प्रवृत्ति। वह प्रायः कहानी का आरम्भ कथोपकथन से करते हैं। इन आरम्भिक कथोपकथनों में पात्रों के कुछ पारस्परिक सम्बन्ध उद्घाटित होते हैं। तत्पश्चात् लेखक उन पात्रों का परिचय देता है, यथा—

'ताऊ जी, हमें लेलगाड़ी ला दोगे ?' कहता हुआ एक पंचवर्षीय बालक बाबू राम जी दास की ओर दौड़ा।

बाबू साहब ने बाहें फैलाकर कहा—'हाँ बेटा, ला देंगे।' बाबू राम जी दास धनी आदमी हैं। कपड़े की आढ़त का काम करते हैं। लेन-देन भी है। इनके एक छोटा भाई है, उसका नाम है कृष्णदास। दोनों भाइयों का परिवार एक ही में है। बाबू रामजी दास की आयु ३५ वर्ष के लगभग है, और छोटे भाई कृष्णदास की २१ के लगभग। रामजी दास निस्सन्तान हैं। कृष्णदास की दो सन्तानें हैं। एक है पुत्र—वही पुत्र जिससे पाठक परिचित हो चुके हैं.........'

इस प्रकार के परिचय का कारण है कि लेखक में निश्चयात्मकता और स्पष्टता का व्यामोह है और इसी कारण कहीं-कहीं इस प्रकार का परिचय अनावश्यक (Superfluous) हो गया है। और इसी प्रकार की पूरी कहानी वर्णित और कथित है व्यंजित नहीं।

कहानी में यत्र-तत्र विचारात्मक सन्दर्भ अनावश्यक रूप से लम्बे हो गए हैं। ऐसे संदर्भ निबन्ध के अंग बन सकते हैं, कहानी के नहीं, यथा—

'मनुष्य का हृदय बड़ा ही ममत्व-प्रेमी है। कैसी ही उपयोगी और सुन्दर वस्तु क्या न हो, जबतक मनुष्य उसको पराई समझता है; तब तक उससे प्रेम नहीं करता। किन्तु भद्दी से भद्दी और बिलकुल काम में न आने वाली वस्तु को भी यदि मनुष्य अपनी समझता है, तो उससे प्रेम करता है' इत्यादि।

यह वह व्यास-शैली है जिसका नेतृत्व द्विवेदी जी कर गए हैं। 'कौशिक' जी सरस्वती-मण्डल के कहानीकार थे, अतः उनमें स्पष्टीकरण का वह मोह है, जिसका परिणाम यह शैली है।

चरित्र-चित्रण करते समय भी 'कौशिक' जी पात्रों के कार्य-कलाप, कथोपकथन या एकान्तिक उक्तियों से संतुष्ट नहीं होते। 'ताई' में रामेश्वरी का बच्चों के प्रति जो संस्कार-जन्य प्रेम और परिस्थिति-जन्य

ईर्ष्या है वह उसके कार्यों और सम्भाषणों से प्रकट हो जाता है पर फिर भी वे कहते हैं—

'यद्यपि रामेश्वरी को माता बनने का सौभाग्य प्राप्त नहीं हुआ था, तथापि उसका हृदय एक माता का हृदय बनने की पूरी योग्यता रखता था। उसके हृदय में वे गुण विद्यमान तथा अन्तर्हित थे, जो एक माता के हृदय में होते हैं परन्तु उनका विकास नहीं हुआ था। इसलिए उसका हृदय उन बच्चों की ओर खिचता तो था, परन्तु उसे ध्यान आता था कि ये बच्चे मेरे नहीं दूसरे के हैं, तब उसके हृदय में उनके प्रति द्वेष उत्पन्न होता था, घृणा पैदा होती थी।'

चयन

(१) प्रो० केसरी कुमार—

'कौशिक' जी दैवी घटनाओ और संयोगों के आधार पर मनोरंजक कहानियाँ गढ़ने में सिद्धहस्त हैं। 'ताई' कहानी इस प्रसंग में प्रमाण रूप उपस्थित की जा सकती है।

(२) डा० लक्ष्मीनारायण लाल—

'कौशिक' जी की कहानी-कला में पूर्ण-रूप से प्रेमचन्द-कला का प्रतिनिधित्व हुआ है। इसका अध्ययन हमें इनकी दो प्रतिनिधि कहानियो 'वह प्रतिमा' और 'ताई' के शिल्प-विधान में मिल सकता है।

पगडण्डी

मानवेतर प्राणियों को आलम्बन बनाकर एक नहीं अनेक कहानियाँ प्राचीन काल में लिखी गईं, उनमें दार्शनिक तथ्यो का समावेश किया गया, राजनीति की शिक्षा दी गई, धर्म का प्रचार किया गया और मानव जीवन के चिरन्तन सत्य प्रेम आदि की भी अभिव्यञ्जना की गई। आधुनिक काल में भी इस प्रकार की कहानियाँ लिखी गईं। सियारामशरण गुप्त की 'कोटर और कुटीर' इसका उदाहरण है; किन्तु जड़ पदार्थ को आलम्बन बनाकर हृदय को व्यंजित करनेवाली कहानी 'पगडण्डी' अद्वितीय है। स्त्री-हृदय की कोमल भावनाओं का चित्रण उनके स्वभाव का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण और सेवा के पथ पर चलने वाले व्यक्ति की अतीत के प्रति ममता तथा करुणा और टीस, जैसी इस कहानी में अंकित की गई है, वह कल्पना-प्रधान कवि और भावुक हृदय की ही देन हो सकती है।

इस प्रकार की कहानी में कवित्वपूर्ण कल्पना का अत्यधिक उपयोग होता है। लेखक ने अमराइयों को चीर कर जाती हुई एक छोटी सी पगडण्डी देखी और उसी पर एक दार्शनिक भावनापूर्ण सुन्दर कहानी की सृष्टि कर दी—केवल अपनी अद्भुत कल्पना-शक्ति से।

इस कहानी का कला-रूप वर्त्तमान कविता के संबोध-गीति (Odes) के कला-रूप से बहुत कुछ मिलता जुलता है। जिस प्रकार सुमित्रानन्दन पंत की कविता 'बादल' में बादल स्वयं अपनी प्रशंसा तथा गुण-दोष सब सुना डालता है, उसी प्रकार पगडण्डी भी एक कहानी के रूप में अपने प्रेम और कलह, अपना मान और अभिमान अपना बचपन और यौवन सबका एक क्रमबद्ध इतिहास कह सुनाती

है। 'पगडण्डी' की रचना के पूर्व निर्जीव पदार्थों की आत्म-कथा लिखने की पद्धति का प्रचलन हिन्दी-साहित्य में था तो पर उस परिपाटी को सजीव, स्वाभाविक एवं सरस रूप देने में एकमात्र उपयुक्त कहानी ही सफल हुई। कहानी का आरम्भ लेखक ने उत्तर पक्ष से किया है इसलिए पाठकों की उत्सुकता पूर्व-पक्ष को जानने के लिए सजग हो उठती है। पगडण्डी की जन्म-कथा कम आकर्षक नही यद्यपि उसके व्याज से कहानीकार ने दर्शन की कुछेक गम्भीर गुत्थियों को सुलझाने का प्रयत्न किया है जो बड़ा ही हृदयग्राही है।

कहानी में कुल तीन पात्र हैं वट दादा, रामी का कूँआ और पगडण्डी, थोडे से शब्दों में इनकी चारित्रिक विशेषता अङ्कित कर दी गई है—

'वट दादा अमराई के सभी वृक्षों में बूढ़े थे और सभी उन्हें आदर और श्रद्धा से वट दादा कहा करते थे। थे तो बड़े वृद्ध, किन्तु उनका हृदय बालकों से भी सरल और युवकों से भी सरस था। वे अमराई के कुलपति थे। उनमें तपस्वियों का तेज भी था और गृहस्थों की कोमलता भी।'

'ठीक इन्हीं से सटा रामी का कूआ—पक्का, ठोस, सजल, स्वच्छ, गम्भीर, उदार।'

'तब मैं ऐसी नही थी। लोग समझते हैं कि मैं सदा को ऐसी ही हूँ—मोटी, चौड़ी, भारी, भरकम। तब मैं न तो इतनी लम्बी थी, न इतनी चौडी। तब मैं एक छोटी सी पगडण्डी थी—दुबली, पतली, सुकुमार, नटखट।'

कवि की सूक्ष्म निरीक्षण-शक्ति एवं स्त्री-चरित्र का गहन अध्ययन कतिपय वाक्य किस प्रकार व्यंजित करते हैं, वह इन उदाहरणों से स्पष्ट हो जायगा:—

'स्त्री का सबसे बड़ा बल है रोना, उसकी सबसे बडी कलहै।

झगड़ा करना। झगडा करके तिनकना, रूठ कर रोना, फिर दूसरे को रुला कर मान जाना, नारी-हृदय का प्रियतम विषय है।'

"स्त्री यदि सचमुच स्त्री है तो सब कुछ कर सकती है, पर अपने रूप का तिरस्कार नहीं सह सकती।……स्त्री का स्त्रीत्व ही संसार का सबसे महान सौन्दर्य है।"

स्थान स्थान पर तथ्यों का भी प्रकाशन है, यथा—

'लक्ष्य और साधन में प्राकारिक अन्तर न होते हुए भी पारिमाणिक अन्तर है।' 'प्रेम सभी कर सकते हैं; किन्तु सेवा सभी नहीं कर सकते।' 'प्रेम से प्रेमिक मिलता है, सेवा से ईश्वर।'

यद्यपि यह कहानी व्यक्तिगत निबन्ध की सीमा के अधिक निकट है फिर भी परिवर्तन-स्थल, चरम-बिन्दु एवं चरित्र-चित्रण के तत्व उपस्थित रहने से कहानी की सरसता बनी रहती है। पगडण्डी का अमराई के परित्याग का निर्णय तथा कुँआ द्वारा अपनी शक्ति पर प्रकाश एवं प्रेम के रहस्य का आकस्मिक उद्घाटन और दोनों का एक दूसरे की गुण-ग्राहकता में विश्वास आदि के द्वारा कहानीकार ने इस कहानी को अत्यन्त ही कलात्मक स्वरूप प्रदान किया है। अन्त में इतना कहना पर्याप्त होगा कि लेखक ने इसे लिखकर जिस कोमल-करुण वातावरण की सृष्टि की है तथा उसके द्वारा जिस सत्य-सन्देश पर प्रकाश डाला है वह अपने आप में शर्व एवं महान है।

चयन

(१) डा० श्रीकृष्ण लाल—

आधुनिक कहानियों का अन्तिम विकास कमलाकान्त वर्मा की 'खंडहर' 'तकली' और 'पगडण्डी' आदि कहानियों में मिलता है जिसमें

लेखक ने आभ्यन्तरिक (Subjective) दृष्टिकोण उपस्थित किया है ।

(३) मोहनलाल 'जिज्ञासु'

'खंडहर'; 'तकली', 'पगडण्डी' आदि ऐसी ही कहानियाँ हैं जिनमें समस्त स्थूल पदार्थ स्नेह-प्यार, मान-अभिमान, कलह–विरोध आदि की करुण गाथा सुनाकर हमारे ध्यान को आकर्षित करते रहते हैं ।

(३) छबिनाथ त्रिपाठी—

कहानी अन्त में एक टीस, एक कसक, एक वेदना पाठक के हृदय पर छोड़ जाती है ।

(४) प्रो० केसरी कुमार—

गुजराती के श्रेष्ठ नाटककार श्री धारणी ने अपनी शोकपर्यवसायी नाटिका 'बरगद' द्वारा जैसे अभिनव संसार का निर्माण किया है वैसे ही सुन्दर जगत् की सृष्टि वर्मा जी ने अपनी 'पगडण्डी' कहानी में की है । कहानी होने के कारण 'पगडण्डी' का उद्देश्य व्याख्यात्मक एवं व्यापक है तथा नाटिका होने के सबब से 'बरगद' का दृष्टिकोण सूत्रात्मक एव तीक्ष्ण है ।

———

जाह्नवी

जैनेन्द्र की कहानी 'जाह्नवी' व्यक्ति-विश्लेषण के रूप में लिखी गई है और इसकी सृष्टि की प्रेरणा में अनुभूति और भाव-अध्ययन की प्रचुरता है।

कहानी में कथा-वस्तु नगण्य सी है। जाह्नवी अपने घर के छत पर खड़ी कौओं को बुलाती है और उन्हें स्नेह से रोटी खिलाती है। खिला चुकने पर 'दो नैना मत खाइयो, मत खालयो पीउ मिलन की आस' गाते हुए खड़ी रहती है, फिर जूड़ा बाँध कर छत से नीचे उतर आती है।

उसके विवाह के लिये कहानी सुनाने वाले के भतीजे से बात-चीत चलती है। भतीजे का नाम ब्रजनन्दन है। विवाह लगभग निश्चित हो जाता है। इसी बीच ब्रजनन्दन को जाह्नवी का एक संक्षिप्त सा पत्र मिला, उसमें लिखा था, 'आप जब विवाह के लिए यहाँ पहुँचेंगे तो मुझे प्रस्तुत भी पायेंगे। लेकिन मेरे चित्त की हालत इस समय ठीक नहीं है और विवाह जैसे धार्मिक अनुष्ठान की पात्रता मुझमें नहीं है। एक अनुगता आपको विवाह द्वारा मिल जायगी। लेकिन विवाह द्वारा सेविका नहीं मिलनी चाहिए।—धर्मपत्नी मिलनी चाहिए। वह जीवन-संगिनी भी हो। वह मैं हूँ या हो सकती हूँ, इसमें मुझे बहुत सन्देह है। फिर भी अगर आप चाहें, आपके माता-पिता चाहें तो प्रस्तुत मैं अवश्य हूँ। विवाह में आप मुझे लेंगे और स्वीकार करेंगे तो मैं अपने को दे ही दूँगी और आपके चरणों की धूलि माथे से लगाऊँगी। आपकी कृपा मानूँगी। कृतज्ञ होऊँगी। पर निवेदन है कि यदि आप मुझ पर से अपनी माँग उठा लेंगे, मुझे छोड़ देंगे, तो कृतज्ञ होऊँगी। निर्णय आपके हाथ में है। जो चाहें, करें।'

पत्र को देख कर ब्रजनन्दन ने निश्चय कर लिया कि विवाह नहीं करूँगा। वह अपने बहिरंग के सम्बन्ध में उदासीन रहने लगा। उसकी

साज-सज्जा और रहन-सहन के आडम्बर में कमी आ गई। विवाह की बात सुनकर वह कहता—'अरे अभी तो उमर पड़ी है।' वह बाहर से शान्त था, पर उसके भीतर जैसे टूटते हुए पख की कराह थी। पर जाह्नवी में किसी भी प्रकार का परिवर्तन लक्षित नहीं हुआ। वह अब भी उसी तरह कौओ को बुलाती, उन्हे रोटियाँ खिलाती और उसी तरह गाती—

'कागा चुन चुन खाइयो, दो नैना मत खाइयो, मत खाइयो
पीउ मिलन की आस।'

कहानी में पात्रों की संख्या कम है वह इसीलिए कि जैनेन्द्र जी की 'दृष्टि फैलने की नहीं, गहरी उतरने की' है, 'एक बात को लेकर मर्म पकड़ने की' है। इसीलिए वे बाहर न झांककर, आत्मा में उतरते हैं। आत्मा की गहराई में उतरकर वे जो चित्र प्रस्तुत करते है, उसमें कुछ धुँधलापन रहता है। पर यह धुँधलापन जैनेन्द्र की कला है। जैनेन्द्र जी पर अस्पष्टता का जो दोष लगाया जाता है, उसके सम्बन्ध में एक बार उन्होंने कहा था कि 'जो व्यक्ति स्पष्ट खाका खीचना चाहे तो वह जीवित आदमी न लिया करें। केवल मिट्टी के खिलौने लें जिनका प्रत्येक अंश भली प्रकार पैमाने की सहायता से नापा जा सकता है। जीवित हृदय को समझने के लिए कुछ बाकी रहता है।'

जैनेन्द्र जी की भाषा वाक्यों की नहीं, परिच्छेदो की है। वैसे अलग-अलग हो जाने पर वाक्य प्राण-हीन लगेंगे पर सबको एक साथ मिलाकर पढ़ते जाइए तो उसमें एक प्रकार का प्रवाह और मर्मस्पर्शिता मिलेगी। वाक्य छोटे-छोटे होते है और उनसे बनी भाषा में प्रौढ़ घरेलूपन मिलेगा—

'असल बात जाननी है तो जाकर पूछो उसकी महतारी से। भली समधिन बनने चली थी! वह तो मुझे पहले ही से दाल में काला मालूम होता था। पर देखो न, कैसी सीधी भोली बातें करती थी।

वह तो, देर क्या थी, सब हो चुका था। बस लगन-मुहूर्त्त की बात थी। राम राम ! भीतर पेट में कैसी कालिक रखे है, मुझे पता न था। चलो, आखिर परमात्मा ने इज्जत बचा ली। वह लड़की घर में आ जाती तो मेरा मुँह अब दिखाने लायक रहता ?'

जैनेन्द्रजी की शैली की विशेषता है सादगी, गाँधी जी की सी। इसलिए इनकी भाषा में स्वाभाविकता है।

जैनेन्द्र जी ने एक स्थान पर लिखा है कि 'कहानी मेरा उद्देश्य नहीं है। इस विश्व के छोटे-से छोटे खण्ड को लेकर हम अपना चित्र बना सकते है और उसमें सत्य का दर्शन पा सकते हैं। वस्तुतः जैनेन्द्र की कहानियों में कथानक का महत्त्व नही, महत्व है मनोवैज्ञानिक क्षणों में किए गए मनोभावों के चित्रण का। इनकी कहानियों में व्यक्त घटनाओं से अधिक महत्व अव्यक्त संघर्ष का है। 'जाह्नवी' में कोई विशेष घटना नही है। अगर कोई घटना है तो महज एक चिट्ठी का भेजा जाना। यहाँ भी लेखक पात्रों को एक विशेष परिस्थिति में रख कर उनका चित्रण करता है। E. M. Forster ने Aspect of the novel में लिखा है कि व्यक्ति के जीवन में दो पहलू हुआ करते हैं। एक का सम्बन्ध इतिहास से है और दूसरे का साहित्य से। उसके व्यापार और उस व्यापार से निर्दिष्ट उसका जीवन, इतिहास से सम्बन्ध रखते हैं। उसकी भावना जिसके अन्तर्गत उसके स्वप्न, आनन्द, वेदना, आत्म-प्रकाश, आदि आते हैं, साहित्य से सम्बन्ध रखती हैं। जैनेन्द्र के पात्रों में भी हम व्यापारो से अधिक भावनाओं का संघर्ष पाते हैं।

यह संघर्ष भी एक विशेष प्रकार का है। इसमें पाप और पुण्य, देवत्व और पशुत्व का संघर्ष नही होता। इसमें पुण्य और पुण्य, देवत्व और देवत्व का संघर्ष होता है। इस दृष्टि से जैनेन्द्र का मार्ग अन्य लेखकों से अलग है। 'जाह्नवी' में नायक और नायिका दोनों निष्कपट

और दोनों 'स्व' का विसर्जन करने को प्रस्तुत हैं फिर दोनों के बीच में मूक दीवाल खड़ी है।

संघर्ष में पडे इन पात्रों के कोमल मनोभावों को जानना भी साधारण पाठक के लिए कठिन है। ऐसा भी लगेगा मानों वे पात्र नहीं जान रहे हैं, उनका अभाव क्या है। जाह्नवी कौन सा दर्द पाल रही है ? इसका उत्तर बहुत सीधा नहीं है। यहाँ जैनेन्द्र की कहानियों की दो विशेपताएँ खुलती हैं। एक तो यह कि जहाँ प्रेमचन्द की कहानियाँ सुधारवादी हैं वहाँ जैनेन्द्र की समस्या-सूचक। दूसरे यह कि जैनेन्द्रजी समस्याओं को, निर्मम आदमी की तरह जोर से झटका देकर नहीं तोड़ते, वडे कोमल हाथों से उन्हे छूते हैं। इसीलिए यदि 'प्रसाद' जी के नाटक प्रसादान्त हैं तो जैनेन्द्र की कथाएँ प्रश्नान्त। और इसी रूप में यह कहानी मर्म का स्पर्श करने में सफल हुई है। और यहीं उनकी स्वय की परिभापा भी चरितार्थ होती है कि कहानी तो एक भूख है जो निरन्तर समाधान पाने की कोशिश करती रहती है। हमारे अपने सवाल होते हैं, शंकाएँ होती हैं, चिन्तायें होती है और हमी उन का उत्तर, उनका समाधान खोजने का, पाने का सतत प्रयत्न करते रहते हैं। हमारे प्रयोग होते रहते हैं। उदाहरणों और मिसालों की खोज होती है। कहानी उस खोज के प्रयत्न का एक उदाहरण है। वह एक निश्चित उत्तर तो नहीं दे देती, पर यह अलबत्ता कहती है कि शायद उस रास्ते मिले। वह सूचक होती है, कुछ सुझा देती है और पाठक अपनी चिन्तन-क्रिया के सहारे उस सूझ को ले लेते हैं।

प्रेमचन्द जी ने ठीक ही कहा था कि 'उनमें (जैनेन्द्र में) अन्तः प्रेरणा और दार्शनिक संकोच का सघर्ष है, इतना हृदय को मसोसने वाला, इतना स्वच्छन्द और निश्कपट, जैसे बन्धनों में जकड़ी हुई आत्मा की पुकार हो।'

रोज

'अज्ञेय' विशुद्ध मनोवैज्ञानिक प्रवृत्ति के प्रतिनिधि कहानीकार हैं। उनकी कहानी-कला का मूल धरातल व्यक्ति-चरित्र है। आपकी कहानी 'रोज' सोद्देश्य सामाजिक, नैतिक आलोचना की दृष्टि से लिखी गई है। इसमें कथानक का रूप सुनिश्चित और स्पष्ट इतिवृत्त के साथ है। इसके निर्माण में दो साधनों का समान रूप से सहारा लिया गया है— प्रथम, आन्तरिक साधन, द्वितीय बाह्य साधन। आन्तरिक साधन जहाँ अमूर्त्त रूप में चरित्र के माध्यम से कथानक का निर्माण करते हैं, वहाँ बाह्य साधन अपने मूर्त्त रूप में क्रमिक घटनाओं, कार्य-विधानों के माध्यम से इसे सुनिश्चित रूप देते हैं।

प्रस्तुत कहानी में घर की चहारदीवारी के अन्दर आजीवन बन्दिनी नारी की जिन्दगी की करुण एकरसता की जीती तस्वीर है जो हमारी वर्त्तमान पारिवारिक व्यवस्था के प्रति एक चुनौती है।

कहानी में कथानक का अंश बहुत ही गौण है। लेखक ने कुछ चरित्रों द्वारा एक अद्भुत प्रभाव (Effect) की सृष्टि की है जिस से कथानक की ओर पाठकों का ध्यान भी नहीं जाता। लेखक ने प्रतिदिन के असंख्य उदाहरणों से एक सुन्दर, प्रभावशाली और भावपूर्ण नमूना छाँटकर सामने रख दिया है कि साधारण मनुष्यों का जीवन कितना भाररूप और कितना ऊब पैदा करनेवाला होता है—

'मैंने देखा कि सचमुच उस कुटुम्ब में कोई गहरी, भयंकर छाया घर कर गई है, उनके जीवन के इस पहले ही यौवन में घुन की तरह लग गई है, उसका इतना अभिन्न अंग हो गई है कि वे उसे पहचानते ही नहीं, उसी की परिधि में घिरे हुए चले जा रहे हैं।'

परन्तु इस कहानी में लेखक ने भारग्रस्त जीवन के प्रति कठोर उपेक्षा का भाव न दिखाकर सहानुभूति ही प्रकट की है।

कहानी में चरित्र-चित्रण की दो पद्धतियाँ विशेष रूप से प्रचलित हैं, विश्लेषणात्मक (Analytic) और संकेतात्मक (Expressive)। जब कहानीकार अपने शब्दों में पात्रों की चरित्रगत विशेषताओं का विश्लेपण कराता है तो उसे विश्लेषणात्मक (Analytic) चरित्र-चित्रण कहते है। जब पात्रों के मनोभावों की व्यंजना घटनाओं अथवा शारीरिक चेष्टाओं द्वारा सांकेतिक रंग से होती है तो उसे सकेतात्मक (Expressive) चरित्र-चित्रण कहते है। चरित्र-चित्रण का यह टेकनीक सबसे आधुनिक है और हिन्दी में व्यापक रूप से यह जैनेन्द्र, अज्ञेय आदि की कहानियों में प्रयुक्त हुआ है। प्रस्तुत कहानी की नायिका का चरित्रांकन इसी ढंग का है—

'वह एकटक मेरी ओर देख रही थी, किन्तु मेरे उधर उन्मुख होते ही उसने आँखे नीची कर लीं। फिर भी मैंने देखा—उन आँखों में कुछ विचित्र सा भाव था, मानो मालती के भीतर कहीं कुछ चेष्टा कर रहा हो, किसी बीती हुई बात को याद करने की, किसी बिखरे हुए वायुमण्डल को पुनः जगा कर गतिमान करने की, किसी टूटे हुए व्यवहार तंतु को पुनरुज्जीवित करने की और चेष्टा में सफल न हो रहा हो······।'

लेखक ने व्यंग्योक्तियों द्वारा वर्तमान व्यवस्था (?) पर अपना आक्रोश व्यक्त किया है—

'पति ढाई बजे खाना खाते हैं इसलिए पत्नी तीन बजे तक भूखी बैठी रहती है।' प्रो० प्रभाकर माचवे ने ठीक ही लिखा है कि 'अज्ञेय' सिर्फ कहानी नहीं कहता। वह साथ में चोट देता चलता है। एक बात और—ऐसे प्रसंगों की अवतारणा में लेखक ने जैनेन्द्र की तरह व्यक्ति-चरित्र के माध्यम से जीवन की गति विधि का अध्ययन किया है।

अज्ञेय ने कहानी को 'जीवन की अधूरी कहानी' कहा है। अज्ञेय किसी भी समस्या को खड़ी कर, उसका विस्तारपूर्वक वर्णन कर अन्त में उसे ज्यों की त्यों छोड़ देते हैं। उनकी कहानी में समस्या भर है, समाधान नहीं। प्रस्तुत कहानी का अन्त इन पत्तियों से हुआ है—

'मालती चुपचाप आकाश में देख रही थी, किन्तु क्या चन्द्रिका को ? या तारों को ?·········तभी ग्यारह का घण्टा बजा।······ ग्यारह के पहले घण्टे की खड़कन के साथ ही मालती की छाती एकाएक फफोले की भाँति उठी और धीरे-धीरे बैठने लगी और घंटा-ध्वनि के कम्पन के साथ ही मूक हो जाने वाली आवाज में उसने कहा— 'ग्यारह बज गए।·········',

यह कहानी न तो सुखान्त है और न दुखान्त अपितु प्रश्नान्त है।

चयन

(१) डा० श्रीकृष्ण लाल—

इस कहानी में रूप और शैली दोनों ही भावपूर्ण और उत्कृष्ट है।

(२) श्री रायकृष्ण दास—

धनवान मरते-मरते जीवन का केवल एक क्षण बढ़ जाने की आशा में डाक्टर वैद्य के लिए तोड़े का मुँह काट देता है। उसी जीवन में यदि कोई रस नहीं रह जाता तो उसका एक क्षण दूभर हो जाता है। अज्ञेय जी ने 'रोज' में भारतीय कुटुम्ब की इस गहरी त्रुटि का विश्लेषण

किया है, जिसे दूर किए बिना वह श्मशान बना जा रहा है—मुर्दों की बस्ती, फिर ऐसे कुटुम्बों की समष्टि, समाज में जीवट कहाँ से आवे !

(३) प्रो० वासुदेव एम० ए०—

यह बड़े आश्चर्य की बात है कि सिर्फ बीस साल की अवस्था में ही अज्ञेय 'विपथगा' और 'रोज' जैसे उच्चकोटि की कहानियाँ लिख चुके थे।

———

दुखवा मैं कासे कहूँ मोरी सजनी

'दुखवा मैं कासे कहूँ मोरी सजनी' में कथानक का आरम्भ बेगम सलीमा और उसकी प्यारी बाँदी को लेकर होता है। इसका विकास इस घटना से होता है कि बाँदी सलीमा को शराब पिलाती है और जब बेगम नशे में बेहोश हो जाती है, तो उसके भरे यौवन में वह बाँदी जो स्त्री के वेश में वस्तुतः उसका प्रेमी था, चुम्बन लेता है। उसी समय संयोगवश वहाँ बादशाह उपस्थित हो जाते है और सब कुछ देख लेते हैं। इस संयोग से कथानक में नाटकीय विकास होता है। चरित्र-अवतारणा में बाँदी और सलीमा इतिहास के भी पर्दे में पूर्ण काल्पनिक हैं जिनकी सृष्टि, सौन्दर्य, प्रेम और बलिदान की रेखाओं से हुई है। इनमें बाँदी का व्यक्तित्व चारित्रिक अन्तर्द्वन्द का प्रतीक है। कहानी का आरम्भ पूर्ण सफल और स्वाभाविक शाही वातावरण के साथ होना है तथा इसकी चरम सीमा पर आदर्श की प्रतिष्ठापना स्पष्ट है।

वातावरण की सजीवता शास्त्री जी की कहानियों की प्रमुख विशेषता है। पात्र एव स्थान के अनुकूल वातावरण की सर्जना में इन्हे विशेष सफलता मिली है। भाषा की विविधता में तो प्रयास भी है, पर वातावरण-निर्माण शास्त्री जी के लिए प्रायः हस्तमलकवत् है। प्रस्तुत कहानी में मुस्लिम सामन्तशाही वातावरण के चित्रण में लेखक को अपूर्व सफलता मिली है। अन्तःपुर का एक चित्र देखिए—

'कमरे में एक कीमती ईरानी कालीन का फर्श बिछा हुआ था, जो पैर रखते ही हाथ भर नीचे धँस जाता था। सुगन्धित मसालों से बने हुए शमादान जल रहे थे। कमरे में चार पूरे कद के आइने लगे थे।

संगमर्मर के आधारों पर सोने चाँदी के फूलदानों में, ताजे फूलो के गुलदस्ते रक्खे थे। दीवारों और दरवाजों पर चतुराई से गुँथी हुई नागकेशर और चम्पे की मालाएँ झूल रही थीं, जिनकी सुगन्ध से कमरा महक रहा था। कमरे में अनगिनत बहुमूल्य कारीगरी की देश-विदेश की वस्तुएँ करीने से सजी हुई थीं।

शास्त्री जी की शैली यथार्थवादी है। उनकी भाषा झूमती हुई चलती है और हर जगह लापरवाह और मस्त बनी रहती है। इसमें वातावरण के निर्माण की अपूर्व क्षमता है, यह हम ऊपर कह चुके हैं और स्वभावतः इसमें वातावरण के अनुकूल शब्दों का प्रयोग होता है। प्रस्तुत कहानी में 'फाहशा' 'कनीज' आदि उर्दू शब्द प्रचुरता से प्रयुक्त हुए हैं। शास्त्री जी की भाषा में एक प्रकार की लहर मिलेगी, वह तरंग जो तट से टकरा कर लौटती है और फिर उठती है। उर्दू-प्रधान गद्य का एक उदाहरण यो है—

'हुजूर मेरा कसूर माफ फर्मावें। दिन भर की थकी होने से बेसुध हो गई थी, हुजूर के इस्तकबाल में हाजिर न रह सकी। और मेरी उस प्यारी लौडी की भी जाँ बख्श की जाय। उसने हुजूर के दौलतखाने में लौट आने की इत्तिला मुझे वाजिबी तौर पर न देकर बेशक भारी कुसूर किया है। मगर वह नई, कमसिन, गरीब और दुखिया है।'

कहानी में कथोपकथन का तारतम्य ऐसा है जैसे नदी में लहरों की गति और उसपर वायु का सहज संगीत, जिसके सहारे पाठक के हृदय में उत्तरोत्तर कहानी पढ़ने की आकांक्षा और जिज्ञासा दोनों बनी रहती है। कथोपकथन सर्वथा देशकाल, पात्र-परिस्थिति और कहानी के गति के अनुकूल हैं। यथा—

सलीमा ने कहा—'कसमिया ! तू अपना दर्द मुझसे कह, तू इतनी उदास क्यो रहती है ?'

बाँदी ने कम्पित स्वर से कहा—'हुजूर क्यों इतनी उदास रहती हैं ?'

सलीमा ने कहा—'इधर जहाँपनाह कुछ कम आने लगे हैं। इसी से तबियत जरा उदास रहती है।'

बाँदी—'सरकार ! प्यारी चीज न मिलने से इन्सान को उदासी आ ही जाती है, अमीर और गरीब, सभी का दिल तो दिल ही है।'

सलीमा हँसी। उसने कहा—'समझी, अब तू किसी को चाहती है। मुझे उसका नाम बता मैं उसके साथ तेरी शादी कर दूँगी।'

साकी का सिर घूम गया। एकाएक उसने बेगम की आँखों से आँख मिलाकर कहा—'मैं आपको चाहती हूँ।'

कहानी में कल्पना, नाटकीय-स्थिति, संयोग और आदर्श आदि तत्वों का आपस में अद्भुत तादात्म्य उपस्थित हुआ है। कहानी का अन्त एक टीस उत्पन्न करता है। 'दुखवा मैं कासे कहूँ मोरी सजनी' वाला गीत, झोपड़ी और महल दोनों की विवशता को आषाढ़ के चढ़ते बादलों की तरह आलोड़ित करता रहता है। वातावरण की इस प्रगाढ़ता में पात्र कहाँ खो जाते हैं, कुछ पता नहीं।

चयन

(१) श्री नन्ददुलारे वाजपेयी—

श्री चतुरसेन शास्त्री की 'दुखवा मैं कासे कहूँ मोरी सजनी' में अद्भुत मादकता का उपयुक्त वायुमण्डल तैयार किया गया है।

(२) डा० लक्ष्मीनारायण लाल—

प्रसाद-संस्थान के कहानीकारों में चतुरसेन शास्त्री का नाम सबसे पहले आता है। इन्होंने 'दुखवा मैं कासे कहूँ मोरी सजनी' कहानी का निर्माण, कल्पना और इतिहास के इतने रूमानी धरातल से किया है कि यह कहानी सदा अमर रहेगी।

५

मिठाईवाला

'मिठाईवाला' कहानी का कथानक बहुत सरल है। मिठाईवाले को बच्चों से बड़ा स्नेह था। उसके बच्चे अकाल ही काल के ग्रास हो चुके थे। इस दुख से दुखी हो कर उसने निश्चय किया था कि नगर के अन्य बच्चों को प्रसन्न देखकर वह अपना शेष जीवन समाप्त कर देगा। इसीलिए कभी वह मिठाईवाला बनकर आता है, कभी बाँसुरिया वाला और कभी खिलौनेवाला, और कभी पैसे लेकर, कभी यों ही मिठाई, खिलौने इत्यादि सामान देकर उन्हें प्रसन्न बदन उछलते-कूदते देखकर स्वयं प्रसन्न होता है।

संसार में कितने ही आदमियों के बच्चे मर जाते हैं किन्तु वे मिठाईवाला बनकर इस प्रकार के कार्य नहीं करते। यह तो एक असाधारण परिस्थिति है। फिर भी यह बात असंभव नहीं जान पड़ती और यही इस कहानी में सौन्दर्य की सृष्टि करती है।

कहानी में कथा का भाग बहुत कम है क्योंकि इसमें उन घटनाओं और प्रसंगों का संकेत मात्र है जिसके द्वारा विशिष्ट चरित्र के प्रधान गुण प्रकाश में लाए गये है। कहानी में लेखक ने यह नहीं बतलाया कि मिठाईवाला कौन था? अपने लड़के की मृत्यु के पहले वह क्या करता था? उसके लड़के की मृत्यु कैसे हुई? इन सब बातों का संकेत-मात्र कहानी में मिलता है। लेखक ने कार्यों और प्रसंगों की कम से कम सहायता ली है, उसका एक मात्र उद्देश्य चरित्र-चित्रण है। प्रसंग के अभाव में, मनोवैज्ञानिक विश्लेषण की दुरूहता में कहानियाँ कभी-कभी कार्य और नीरस हो जाया करती हैं और कभी-कभी तो

ऐसा लगने लगता है कि लेखक कहानी लिखने नहीं किसी मनोवैज्ञानिक समस्या को सुलझाने बैठा है। परन्तु इस कहानी में यह नीरसता नही है क्योंकि इसमें मनोवैज्ञानिक विश्लेषण के साथ रम्य और घटना-निर्देश का मणि कांचन योग हुआ है।

निरपेक्ष रहकर दूर से चित्र उतारने में लेखक पटु है। व्यावहारिकता द्वारा चित्रण सजीव हो गया है। भाषा चलती हुई है—

'माँ कितनी मिठाई दूँ ? सभी तरह की मिठाइयाँ हैं, रंग विरंगी, कुछ कुछ खट्टी, कुछ कुछ मीठी और जायकेदार। बड़ी देर तक मुँह में टिकती है। जल्दी नही घुलतीं। बच्चे बड़े चाव से चूसते हैं। इन गुणों के सिवा ये खाँसी को भी दूर करती है। कितनी दूँ ? चपटी, गोल और पहलदार गोलियाँ हैं पैसे की सोलह देता है।'

छोटे-छोटे वाक्य ही इसके प्राण हैं।

चयन

(१) श्री भगवती प्रसाद जी वाजपेयी—

प्रश्न उठा है कि मेरी सर्वश्रेष्ठ कहानी कौन है ?

मैं क्या उत्तर दूँ, यह मेरी समझ में नही आता। जिन रचनाओं का जन्म मेरी आत्मा के रस से हुआ है—संघर्ष के घोर निपीड़ित कोलाहल और हाहाकार से हुआ है, उन सबकी अवमानना का अर्थ मैं जानता हूँ। व्यावहारिक जगत में जिनका अधिक मूल्य आंका गया है, वही श्रेष्ठतम है यह मैं केसे मान लूँ। जिस देश में शिक्षा-शास्त्र के

स्वनामधन्य अधिनायक पाठ्यक्रम को सेक्स से मुक्त रखने की शपथ लेकर गौरवान्वित होते हों, वहाँ कथा साहित्य के साथ न्याय होगा ! शिव-शिव ; सोचता हूँ 'मिठाईवाला', 'स्पर्धा', 'प्रलोभन' तथा 'महा-पुरुष' जैसी बीस-पचीस सेक्स-हीन कहानियाँ यदि मैंने न लिखी होतीं तो मेरी क्या स्थिति होती। परन्तु पाठ्य-क्रम में स्वीकृत कहानियों की ही चर्चा विशेष हुई, इस प्रत्यक्ष सत्य को तो मुझे स्वीकार करना ही पड़ेगा। इस दृष्टि से देखूं तो 'मिठाईवाला' और 'निंदिया लागी' ने निस्सन्देह मेरा अधिक प्रतिनिधित्व किया है। 'मिठाईवाला' मेरी सन् ३० के लगभग की रचना है, 'निंदिया लागी' सन् ४० के लगभग की।

कवि

अपनी 'कवि' शीर्षक कहानी में 'वियोगी' जी ने इस सत्य की व्यंजना की है कि आधुनिक युग कवि और कविता के लिए उपयुक्त नहीं है। वस्तुतः आज का हमारा जीवन तर्क से निष्करुण और हिंसा से जर्जर हो गया है—इस कठोर बुद्धिवाद के युग में कविता का आदर्श पनप ही नहीं सकता। आज के वे कवि पागल हैं, जो भारत की दयनीय दशा की उपेक्षा कर प्रकृति के मोहक रूप पर अपने को न्यौछावर कर देते है, 'तितली के साथ लुका-चोरी और श्याम सजल मेघ-घटाओं के साथ विहार करना चाहते हैं।'

इस व्यंजना के लिए लेखक हिन्दी के महान कवि तुलसी, सूर, बिहारी, देव और केशव से भारती के द्वार पर सत्याग्रह कराता है कि भारत में फिर से कवि उत्पन्न हों। देवी भारती कवियों का अनुरोध मानकर रामधन तेली और एक डिप्टी साहब मि० सिंह को कवित्व शक्ति प्रदान करती हैं और वे दोनों ही पागल करार दे पागलखाने भेज दिये जाते हैं। अन्त में उन कवियों को ज्ञात हो जाता है कि आधुनिक युग भारत में कवियों के लिए उपयुक्त नही है और वे धरना देना बन्द कर देते हैं।

कहानी में प्रभाव की एकसूत्रता है। भाषा भावानुकूल परिवर्तित होती गई है। रामधन गुप्त का प्रलाप सुनिए—

'प्रियतमे ! अयि मम-मानस-लोक-निवासिनी प्रेम-प्रतिमे ! कवि-शिरोमणि, कविता-कामिनी-कान्त कवियों ने जिसके विराट् वैभव को अपने सुमधुर स्वरों में व्यक्त किया है, ऐसे इस जन मन-रंजन प्रभात

के समय का यह पीताभ शशि मानों परकीया-नायिका शर्वरी के साथ, इच्छापूर्वक विहार कर लेने के बाद—मन्द मन्द गति से—कलंक-रूप अजन जावकादि धारण लिए, स्वकीया प्रतीची के यहाँ जा रहा है। उषा-सखी व्यंग्य से दीप दिखला रही है।'

कविराज जी सन्निपात-ग्रस्त रोगी को देखकर कहते हैं—

'हा हरि ! अच्छा चलो, मैं महानारायण तेल दूँगा। इन्हे ऐसी जगह में रखो, जहाँ हवा न आती हो। ब्राह्मी या चन्द्रोदय का सेवन कराना भी बहुत जरूरी हैं।'

प्रस्तुत कहानी प्रभाव-प्रधान है। प्रभाव-प्रधान कहानी में उसका प्रभाव ही सब कुछ है, चरित्र, कथानक इत्यादि का कोई विशेष महत्व नहीं। इस कहानी में न तो तुलसी, सूर और केशव का भारती के द्वार पर धरना और न भारती का वरदान ही मुख्य अंश है, वरन् कहानी का यह प्रभाव कि आधुनिक युग कविता के लिए उपयुक्त नही है इस कहानी में प्रधान वस्तु है।

कामकाज

चन्द्रगुप्त विद्यालंकार जी की कहानियों में किसी एक भाव-विशेष को लेकर प्रभाव उत्पन्न करने की चेष्टा की गई है। उसके लिए जीवन के बाह्य चित्रों को प्रस्तुत किया गया है। इन कई बाह्य घटनाओं या चरित्रों के उल्लेख में एकसूत्रता का अभाव है पर वे सभी पृथक पृथक रूप में उपस्थित चित्र एक ही भाव का प्रभाव पाठक के हृदय पर डालते हैं। इन प्रभाववादी कहानियों में 'कामकाज' इसी प्रकार की कहानी है जिसमें तीन विभिन्न दृश्यों द्वारा आधुनिक जीवन की व्यस्त झाँकी दिखलाई गई है। जीवन की यह व्यस्तता किस प्रकार हमारे हार्दिक भावों को दबा देती है, इसी का चित्रण कहानी का लक्ष्य है।

ये तीनों चित्र निम्न क्रम से हैं:—

(१)

क्वेटा के भूकम्प में अनेक घर ध्वस्त हो गए, सहस्रों प्राणी मृत हुए। बहुत कम व्यक्ति ही बचकर निकल पाए। उनमें से एक युवक और एक वृद्ध अनारकली के बाजार में घूमते हुए लाला कस्तूरीमल के कपड़े की दुकान में प्रवेश करते हैं।

लाला कस्तूरीमल के दुकान में सेल्समेन की कमी नहीं थी मगर वृद्ध की मैली आकृति में कुछ ऐसा आकर्षण था कि लाला साहब ने आगे बढ़कर स्वयं उनका स्वागत किया। बात यह थी कि लाला साहब को विश्वास हो चला था कि ये सज्जन क्वेटा से ही आ रहे हैं। लाला साहब पिछले तीन दिनो में कम से कम बारह तार क्वेटा को दे चुके

थे और उनमें से एक का जवाब भी नहीं मिला था। उनके बहनोई अपने सम्पूर्ण परिवार सहित क्वेटा में ही रहते थे और उनके सम्बन्ध में उन्हें अबतक कोई सूचना नहीं मिली थी। लाला कस्तूरीमल जब आश्वस्त हो गए कि ये वृद्ध सज्जन क्वेटा से ही आ रहे हैं तो उन्होंने आगन्तुक से जरा व्यग्र भाव से पूछा—'पब्लिक वर्क्स डिपार्टमेण्ट के मि० मधुसूदन को आप जानते हैं?' उत्तर मिलता है—'मुझे आपके साथ हार्दिक सहानुभूति है। मि० मधुसूदन अब इस दुनिया में नहीं रहे।'

जिस प्रकार एक डूबता हुआ व्यक्ति तिनके के आसरे को भी नहीं छोड़ना चाहता, उसी प्रकार लाला कस्तूरीमल ने भी अपने अविश्वास को जबरदस्ती जमाये रखने की चेष्टा की और वृद्ध सज्जन से विविध प्रश्नोत्तर किये। पर वे बहुत देर तक अपने को छल नहीं सके। अब उन्हें पूरा विश्वास हो चुका था कि उनके बहनोई सचमुच अब इस दुनिया में नहीं रहे।

किन्तु उस उद्विग्नता में भी लाला साहब के हाथ अपनी सहज गति से ग्राहक के सामने धोती का जोड़ा खोल कर दिखाने लगे—'यह कर्नाटक का माल है। कर्नाटक ने नागपुर को बडा धक्का पहुँचाया है।'

कर्नाटक ने तो नागपुर को जरूर बड़ा धक्का पहुँचाया। पर मि० मधुसूदन की मृत्यु के समाचार ने लाला कस्तूरीमल के दिल में कोई धक्का नहीं पहुँचाया और वे सहज और निर्विकार भाव से अपना सारा काम-काज करते रहे।

'इसी समय एक संभ्रांत महिला उस दुकान में आईं। लाला कस्तूरीमल अपने एक सहकारी को उन सज्जन के पास छोड़कर स्वयं उस महिला की ओर बढ़ गए। उनके चेहरे पर इस समय हद दर्जे की उदासी छाई हुई थी, परन्तु उनकी तत्परता पर इस उदासी का कोई प्रभाव न पड़ने पाया था।'

(२)

रावलपिण्डी जेल का चौकीदार यूसुफ मजे-मजे में ग्यारह का घंटा बजा रहा था। इसी समय उसे एक तार मिलता है। उसके ससुर साहब मरणासन्न है। मौत के बाद कोई और व्यक्ति ठीक तौर से उन्हें दफना सकेगा, इस बारे में उन्हें शक था, इसीसे उन्होंने यूसुफ को बुलाने के लिए तार भिजवाया है।

इस जेल में चौकीदार नियुक्त हुए यूसुफ को पन्द्रह बरस बीत गये हैं। इन पन्द्रह बरसों में वह एक भी बार अपने देश को नहीं गया। कभी किसी बात के लिए एक दिन की भी छुट्टी नही ली। पर अपने श्वसुर का तार पाकर सहसा यूसुफ को अपनी मातृभूमि की स्मृति हो आई। वजीरिस्तान के वे नंगे पहाड़, उन पहाड़ों पर चरती हुई भेड़ें और उन भेड़ों के साथ-साथ स्वच्छ हृष्ट-पुष्ट और सुन्दर युवतियाँ!

मातृभूमि की याद से एक विशेष तरह की स्निग्धता का भाव यूसुफ के चेहरे पर झलक उठा और वह पश्तो का एक गीत गुनगुनाता हुआ जेलर साहब की ओर बढ़ा।

जेलर साहब ने चिढ़ कर कहा—'तुम्हें कौन खास काम है? ससुर का दफनाना। यह भी कोई काम है?'

कठोर-हृदय यूसुफ ने सिर झुका लिया—जैसे वह पराजित हो गया हो; मगर जेल के क्लर्क ने उसकी मदद की। वह बोला—'शायद कोई जायदाद-वायदाद का मामला हो।'

यूसुफ खीझ उठा। वह अब बरदाश्त न कर सका। उसने कहा—'मैं किसी जायदाद के लालच से नहीं, मैं अपने ससुर के खिदमत के ख्याल से वहाँ जाना चाहता हूं।'

जेलर ने कहा—'तुम्हारी छुट्टी मंजूर होने में दो दिन अवश्य लग जायँगे।'

यूसुफ और क्लार्क दोनों ने हैरानी के साथ जेलर साहब की ओर देखा। उन दोनों के लिए यह बात अश्रुतपूर्व थी। क्लार्क ने कहा—'दरख्वास्त पर आप ही के दस्तखत काफी नहीं हैं क्या?'

अपनी कमीनगी पर मुस्कराहट का पर्दा डालते हुए जेलर ने कहा—'यार, तुम्हें मेरी सेवों की एक पेटी पेशावर तक अपने साथ ले जानी होगी। वह पेटी परसों से पहले यहाँ नहीं पहुँच सकती।'

जेलर साहब का यह काम इतना महत्त्वपूर्ण था कि बेचारा यूसुफ उसी दिन रवाना होने के लिए अधिक आग्रह न कर सका।

(३)

साइकिल के पैडलों पर तेजी से पैर मारते हुए देसराज बैंक की ओर चला जा रहा था। शनिवार का दिन था और बारह बजकर पैंतिस मिनट हो गए थे। बैंक जाकर उसे अपने मालिक की एक रेलवे की रसीद छुड़ानी है।

आगे सड़क पर बीस-पच्चीस आदमियों की भीड़ इकट्ठा थी। देसराज को वहाँ रुकना पड़ा। एक आदमी सड़क पर पड़ा बेहोशी की दशा में भी अत्यधिक व्याकुल और क्षीण स्वर मे बार-बार पुकार उठता है—'पानी! पानी!'

मगर आस-पास कहीं पानी नहीं है। एक ठेले वाले ने देसराज से कहा—'बाबू जी, वह यहाँ से थोड़ी दूर पर युनिवर्सिटी के लड़कों का क्लब है। आप यदि साइकिल पर वहाँ जाकर एक लोटा पानी ला सकें तो इस बेचारे की जान बच जाय।'

देसराज के हृदय में सचमुच दया का संचार हो गया। वह खुद भी एक गरीब बाबू है—ऐसा गरीब बाबू जिसे अपने जीवन-निर्वाह में इन ठेलेवाले मजदूरों से बढ़कर भी कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है।

पर हृदय की सम्पूर्ण भावुकत को कुचल कर देसराज साइकिल पर सवार हो गया और कुछ गज आगे बढ़ कर वह कहता गया—'बीस-पचीस मिनट में वापस आता हूँ।'

बैंक से अपना काम समाप्त कर जब देशराज वहाँ पहुँचा तो उसने देखा कि वहाॅ तमाशबीनों की भीड़ इतनी बढ गई है कि सड़क पर राह मिलनी भी कठिन है। पूछने पर मालूम हुआ कि कोई मुसाफिर राह चलते सडक पर गिर कर मर गया है और पुलीस उसकी लाश लेने आई है।

'देशराज ने एक ठडी साँस ली और धीरे धीरे उस भीड़ को पार कर पुनः साइकिल पर सवार हो गया। पांच सौ रुपयों की पोमेड वेसलीन के पार्सल की अत्यधिक महत्वपूर्ण रेलवे-रसीद अब उसकी जेब में पडी थी।'

लेखक ने तीन पृथक चित्र तीन पृथक कहानियों के रूप में उपस्थित किये हैं और उन तीनों में ऐसा जान पड़ता है कि मानव अपने काम-काज के पीछे मानवता की बलि चढ़ा चुका है। लेखक ने प्रतिदिन के जीवन के असख्य उदाहरणो से केवल तीन नमूने छाॅ-टछाॅट कर रख दिये हैं जो चिल्ला चिल्ला कर कहते हैं कि देखो काम-काज के पीछे मानवता की बलि चढ़ गई है और इन कहानियों के पीछे कलाकार मानों चुप-चाप कह रहा हो कि मैंने अपनी ओर से कुछ भी नहीं जोडा-घटाया है, वास्तविक चित्र पाठकों के सामने है वे स्वयं देख सकते हैं।

प्रभाव की दृष्टि से पहले की अपेक्षा दूसरे चित्र में और दूसरे की अपेक्षा तीसरे चित्र में तीखापन अधिक है। पहले चित्र में आदमी काम-काज के पीछे इतना परीशान दीखता है कि मृतक के प्रति अपनी सहानु ति नही प्रकट कर सकता। दूसरे चित्र में यह व्यंजना है कि आदमी मृतप्राय के निकट पहुँचकर अपनी सम्वेदना नही पहुँचा सकता और तीसरे चित्र में यह व्यंजना है कि आदमी काम-काज के पीछे इतना मजबूर, इतना असहाय है कि चाह कर भी मरणासन्न को मृत्यु के मुख से खीच नही सकता।

प्रसन्नता की प्राप्ति

कल्पना और भावुकता की प्रेरणा से रायकृष्णदास जी ने इतिहास और अतीत के धरातल से कहानियाँ लिखी हैं। 'प्रसन्नता की प्राप्ति' में कथावस्तु अत्यन्त सूक्ष्म और भावात्मक है। इसमें एक मूर्ति-निर्माता के चरित्र का सुन्दर विश्लेषण हुआ है। चित्रकार कितने वर्षों से अपने चित्र में प्रसन्नता की अभिव्यक्ति देने के प्रयत्न में लगा था, पर बार-बार असफल हो रहा था। अन्त में वह अपने बच्चे में सच्ची प्रसन्नता पा लेता है।

कहानी में चरित्र-अवतारणा, भावुकता और कल्पना के धरातल पर हुई है। कहानी में मनोवैज्ञानिक द्वन्द्व का आकर्षण सफलता से व्यक्त हुआ है और कहानी के विकास और अन्त में नाटकीय तत्व विशेष रूप से आए हैं।

कहानी-कला का मेरुदण्ड वास्तविक जीवन है, काल्पनिक लोक नहीं। वास्तविक जीवन देश, काल और जीवन की विभिन्न सत्-असत् परिस्थितियों से निर्मित होता है अतएव इन तत्वों का एक स्थान पर संचयन और चित्रण करना कहानी में वातावरण उपस्थित करना है। कहानी की कथा-वस्तु और उसके संचालक पात्रों का सीधा सम्बन्ध उक्त स्थितियों से होता है अर्थात् इनका उद्गम-सूत्र और सम्बन्ध किसी देश में होगा या किसी विशिष्ट स्थान अथवा प्रदेश से होगा। इनका भी सम्बन्ध किसी काल-विशेष से होगा। इन सबके सामूहिक संकलन और प्रभाव से कहानी में वातावरण की सृष्टि होती है। प्रस्तुत कहानी में वातावरण और परिपार्श्व की अवतारणा इतनी मनहर हुई है कि दृश्य का प्रत्यक्ष अनुभव सा होने लगता है—

'भद्रक महाराज के सामने नत हुआ। राज-सभा एकत्र थी। महाराज सिंहासन पर आसीन थे। सुदर कलाइयों वाली रूपसी तरुणियाँ इठलाती हुई, उनपर चँवर डुला रही थीं। बन्दी समूह कीर्त्तिगान में निरत था।'

कहानीकार की भाव-व्यंजना में अलंकारों के प्रयोग बड़े मनोहर और प्रकृत हुए हैं। उनका उपमान-जगत् व्यावहारिता से सजीव बना रहता है, अतएव उनकी उपमाएँ और उत्प्रेक्षाएँ भी नित्य के साधारण व्यवहार-क्षेत्र की होती हैं, यथा—

'कच्ची नीद में जगाया हुआ व्यक्ति जैसे बिगड उठता है वैसे ही भद्रक भी झल्ला उठा।'

कहानी में कथोपकथन सर्वथा पात्र के अनुकूल और स्वाभाविक है। उसमें व्यावहारिकता का सहज आकर्षण और आनन्द है—

'कलिका अटारी पर पहुँची और उलाहना देती हुई उससे कहने लगी—"कैसे निर्मोही से पाला पड़ा। डेढ़ पहर रात बीत गई कुछ खाने-पीने की भी सुध है? अपने शरीर को तो देखो—सूख कर काँटा हुए जा रहे हो। उस पर तो दया करो।"

विनोद और व्यंग्य के समावेश से कथोपकथन में मनोरंजकता आ गई है।—'बस, देखते ही बौरा गई।' कलिका की सखी का यह व्यंग्य बड़ा चुभता हुआ है।

———

मुगलों ने सल्तनत बख्श दी

'मुगलों ने सल्तनत बख्श दी' व्यंगात्मक शैली में लिखी वर्मा जी की एक उत्कृष्ट कहानी है। वस्तुतः आधुनिक कहानी में कथानक का तत्व आवश्यक होते हुए भी अनिवार्य नहीं है। कभी-कभी केवल कुछ मनोरंजक बातो, चुटकुलों और चित्त को आकर्षित करनेवाली सूझों के आधार पर ही कहानी की सृष्टि हो जाया करती है। प्रमाण स्वरूप प्रस्तुत कहानी प्रस्तुत की जा सकती है। इसमे कथानक कुछ भी नही है, केवल एक मनोरंजक बात जिसे लेखक ने अपनी अद्भुत कल्पना-शक्ति से, केवल अपनी शैली के बल पर एक कहानी के रूप में प्रस्तुत किया है।

एक गप हाँकने वाले के मुँह से इतिहास की कहानी सुन कर हँसते-हँसते पेट में बल पड़ जाते हैं पर स्थिर होकर सोचने पर कहानी में भारतीय इतिहास का एक गम्भीर सत्य मिलता है। लेखक ने अपनी व्यंग्यात्मक शैली में अंग्रेजों की कूटनीति तथा चालबाजी का अद्भुत चित्रण किया है। रबड़ के तम्बू से उसने अंग्रेजो के उस जाल का सकेत किया है जिसके कारण वे सारे भारतवर्ष पर अधिकार करने में सफल हुए। साथ ही लेखक यह भी व्यंजना करना चाहता है कि मुगल बादशाह इतने मूर्ख, प्रमादी तथा विलास-प्रिय थे कि अंग्रेजों को हिन्दुस्तान की बादशाहत लेने में कोई परिश्रम नहीं करना पड़ा।

कहानी में मूल कथानक तो बहुत ही कम है, किन्तु लक्षणा-त्मक ढग से इस में भारत की पराधीनता का पूरा इतिहास ही भरा हुआ है। कहानी में केवल एक ही चरित्र है—वह है हीरो जी। हीरो

जी अपने नशे में मस्त, दीन-दुनिया से बेखबर, लोगों के मनोरंजन के साधन तथा परले सिरे के नशेबाज तथा गप्पी आदमी हैं। नशे के लिए ही वे दुनिया से अपना सम्बन्ध रखते हैं।

कहानी की भाषा बड़ी ही चुटीली तथा प्रौढ़ है। व्यंग्य के कारण भाषा में सजीवता और तीखापन काफी है। कहानी का चित्रण लाक्षणिक है। भाषा में वर्मा जी के हाथों की अच्छी सफाई है।

अपराध

व्यास जी की प्रायः अधिकांश कहानियाँ करुणा और मानवीय सम्वेदना को लक्ष्य बनाकर लिखी गई है तथा कहानियों के विकास में अनुभूति की प्रेरणा मुख्य है। 'अपराध' आपकी शिल्प-विधि की प्रतिनिधि कहानियो में से एक है।

कहानी में कथावस्तु अत्यन्त संक्षिप्त है। अमावस्या की काली रात थी। रात के सन्नाटे में आधी रात को शोर हुआ; लेखक का नौकर गंगा जोर से कह रहा था—'इसको खूब मारो।'

लेखक के यह पूछने पर कि शोर क्यों हो रहा है, गंगा ने सामने एक कम्बल और कुछ कपडे दिखलाते हुए कहा—'इ पे ऊपर की खिड़की से मंगला ने फेंका था। मुझे इसकी आहट लग गई थी। मैं उस समय जागता रहा, उसने सलाई बाली थी। ऊपर से धम से कोई चीज नीचे गिरी। मैंने सचेत होकर द्वार खोला, यह भाग रहा था, मैंने इसे पकड़ा है।'

अपराधी की तरह मंगला लेखक के सामने आ गई और बड़े साहस से उसने कहा—'अपराध मेरा है। मैंने ऊपर से फेंका था इन्होंने इसे लिया, यह निर्दोष हैं।'

लेखक हतप्रभ सा सोचता रहा कि इन दोनों में प्रेम है, तभी मगला ने इसके लिए अपराध किया है। ये लोग दरिद्र हैं, पर इनके पास भी हृदय है। अभाव और दरिद्रता ने ही मंगला को चोरी करने के लिए बाध्य किया है।

लेखक के हृदय में दोनों के प्रति एक अयाचित ममता जग उठी। उसने मगला को निकाला नही और उसके प्रेमी को भी अपने यहाँ नोकर रख लिया। उसे निश्चिन्तता थी कि वे दोनों अब चोरी नहीं करेंगे।

संक्षेप में यही कहानी का कथानक है। कहानी में कथानक-निर्माण घटना–सयोग से न होकर स्वाभाविक भाव-विकास और चरित्र-विश्लेषण के आधारपर हुआ है।

देशभक्त

'उग्र' ने 'प्रसाद' की भाँति तीन प्रकार की कहानियाँ लिखी हैं। प्रथम कल्पना और भावुकता के आधार पर व्यंजनात्मक एव प्रतीकात्मक कहानियाँ, द्वितीय केवल भावुकता के आधार से गद्य-गीत से मिलती-जुलती कहानियाँ तथा नाटकीय स्थिति के प्रकाश में जीवन के किसी सूक्ष्म पहलू को रेखाचित्र में बाँधनेवाली कहानियाँ। इनके उदाहरण में क्रमशः 'देशभक्त' 'मोको चुनरी का साध' तथा 'रेशमी' आदि कहानियाँ उल्लेखनीय हैं।

प्रस्तुत कहानी (देशभक्त) में पुराण-कथा के रूप में एक सुन्दर कथा की सृष्टि हुई है। एक दिन ब्रह्माणी ने ब्रह्मा से कहा—'स्वामिन्, आज कोई सुन्दर सृष्टि करो। किसी ऐसे प्राणी का निर्माण करो जिसकी रचना पर हमें गौरव हो सके।'

क्षिति, जल, अग्नि, आकाश और पवन के सम्मिश्रण से विधाता ने एक पुतला तैयार किया। इसके बाद उन्होने सबसे पहले तेज को बुलाकर उस पुतले में प्रवेश करने को कहा। तेज के बाद सौंदर्य, दया, करुणा, प्रेम, विद्या, बुद्धि, बल, सन्तोष, साहस, उत्साह, धैर्य, गम्भीरता आदि समस्त सद्गुणों से उस पुतले को सजा दिया और ब्रह्मा ने कहा—'इसके भाग्य में लिखी जा रही है भयंकर दरिद्रता, दुःख, चिन्ता और इसकी आयु होगी बीस वर्षों की।'

ब्रह्माणी ने पूछा—'इसे मर्त्यलोक वाले किस नाम से पुकारेंगे ?'

प्रजापति ने गर्व भरे स्वर में उत्तर दिया—'देशभक्त।'

मर्त्यलोक में आकर देशभक्त ने देशद्रोहियों का विरोध किया और अपने अप्रतिहत कृतित्व का स्थापन कर अपनी दृढ़ देशभक्ति का परिचय दिया। वह बन्दी बना लिया गया। उसने 'सम्राट की जय' बोलने से इन्कार कर दिया। फिर देव-मण्डल के बीच में बैठी हुई माता मनुष्यता की गोद में बैठकर देश भक्त ने और साथ ही त्रिंस कोटि देवताओं ने देखा, पंचत्व के एक पुतले को अत्याचार के उपासकों ने तोप से उड़ा दिया।

उस पुतले के एक एक कण को देवताओं ने मणि की तरह लूट लिया। बहुत देर तक देवलोक 'देशभक्त की जय' के नाद से मुखरित रहा।

'उग्र' की सर्वश्रेष्ठ कहानियाँ वे हैं जो राजनीतिक विषय-वस्तु पर आधारित हैं। प्रस्तुत कहानी में पुराण-कथा के रूप में कहानी की कलात्मकता और व्यजना शक्ति बहुत अधिक बढ गई है।

कवि की स्त्री

'कवि की स्त्री में' कथावस्तु अत्यन्त विस्तृत है। संक्षेप में इसका कथानक इस प्रकार है—

छात्रावस्था में सत्यवान और मणिराम परस्पर घनिष्ट मित्र थे। एफ० ए० पास करने के पश्चात सत्यवान ने साहित्य क्षेत्र में पदार्पण किया और मणिराम डाक्टर बना। सत्यवान ने अपनी सरस कविताओं से बहुत कीर्ति अर्जित कर ली थी। उसे एक दिन एक युवती का प्रशंसात्मक पत्र प्राप्त हुआ। सत्यवान ने उसका उत्तर दिया। यह पत्र-व्यवहार का क्रम बहुत काल तक चलता रहा। दोनों सहज भाव से एक दूसरे के प्रति आसक्त हुए और विवाह के सूत्र में बँध गए।

सत्यवान हर समय कविताओं में ही खोया रहता था। वह अपनी सुध-बुध तक खो बैठा था। एक दिन जब सत्यवान किन्हीं सुकुमार भावों को छन्दों में बाँधने का आयास कर रहा था, सावित्री उसके निकट आई; वह उसे अपने साथ घूमने के लिए ले जाना चाहती थी। पर सत्यवान मजबूर था। वह न जा सका। सावित्री पति के इस व्यवहार से बहुत खिन्न हुई। वह अनमनी सी अकेले घूमने निकली। वह एक पुलपर बैठ गई। सहसा उसकी आँखें झपक गई और वह नीचे गंगा में गिर पड़ी। मणिराम ने कूदकर सावित्री को बचा लिया।

फिर इधर मणिराम और सावित्री में प्रेम-सा (?) हो गया। काल पाकर वह अधिक पल्लवित हुआ। सत्यवान को यह रहस्य ज्ञात हो गया। उसने एक कविता लिखी जिसकी पहली पंक्ति थी— भयो क्यों अनचाहत हो संग।' कविता देख कर सावित्री की आँखों से आग

बरसने लगी। वह सत्यवान से उलझ गई। दोनों में परस्पर उग्र वाद-विवाद हुआ। उसी दिन सत्यवान ने आत्म-हत्या कर ली। मृत्यु का दृश्य देखकर सावित्री डर गई। परन्तु उसे दुख नहीं हुआ। उसे चिन्ता थी तो महज इस बात की कि कहीं मुकदमे के लपेट में न आ जाऊँ।

दो मास बाद! सावित्री अपने घर के आँगन में बैठी मणिराम के लिये टाई बुन रही थी। उसे नौकर ने आकर अभी डाक से आए एक पैकेट को दिया। यह उसके मृत पति की कविताओं का एक संग्रह था, जो उसे ही समर्पित था। सावित्री के हृदय में हलचल मच गई। उसने मणिराम के प्रणय को, विवाह के प्रस्ताव को अस्वीकार कर दिया।

उस रात सावित्री को नींद नहीं आई। उसने पति को ठुकरा दिया था, परन्तु उसके प्रेम को न ठुकरा सकी। मनुष्य मर जाता है, उसका प्रेम जीता रहता है।

कहानी में अनुभूतियाँ, घटनाओं और कार्य-व्यापारों की शृंखला से निर्मित हुई हैं और उनके प्रकाश में कथावस्तु का रूप कहानी में मुख्य है। कथानक पूर्ण इतिवृत्तात्मक और स्थूल है।

पात्रों की सृष्टि कहानी की मुख्य सम्वेदना के अनुकूल है। ये पात्र न केवल घटनाओं के जाल में ही खेलते हैं किन्तु पाठकों के अन्तर्मन में प्रविष्ट होकर उनमें प्राण-शक्ति का संचार करते हैं। ये पात्र सामान्य हैं, हमारे समाज के बीच के हैं फलतः इन पात्रों से हमारा पूरा साधारणीकरण हो जाता है। ये पात्र हमारे देखे-सुने, जाने-पहचाने लगते हैं। कहानी में कहीं-कहीं चरित्र-विश्लेषण कथोपकथन के माध्यम से हुआ है।

केवल वर्णनों द्वारा सम्पूर्ण कहानी की सृष्टि में जो बात सबसे अधिक अकलात्मक सिद्ध होती है वह है कहानी में पात्रों का अव्यक्त

हो जाना । ऐसी स्थिति में कहानियों में प्रभविष्णुता और सम्वेदन-शीलता दोनों विशेषताएँ प्रायः नष्ट हो जाती हैं । पर प्रस्तुत कहानी यद्यपि एक प्रकार से वर्णनात्मक है फिर भी इसमें कथोपकथन और वर्णन विवेचन में सुन्दर समन्वय और अनुपात है ।

चयन

(१) डा० हरदेव बाहरी—

उनकी (सुदर्शन की) 'कवि की स्त्री' आत्म-कथा शैली की कहानियों में और 'न्याय-मन्त्री' ऐतिहासिक कहानियों में सर्वश्रेष्ठ हैं ।
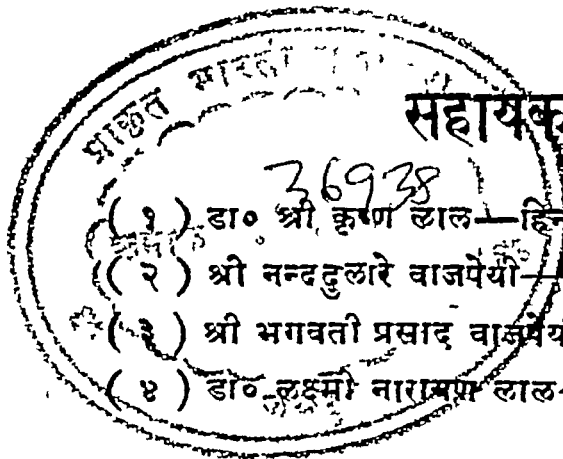
सहायक-ग्रंथ

(१) डा० श्री कृष्ण लाल—हिन्दी कहानियाँ

(२) श्री नन्ददुलारे वाजपेयी—हिन्दी की श्रेष्ठ कहानियाँ

(३) श्री भगवती प्रसाद वाजपेयी—प्रतिनिधि कहानियाँ

(४) डा० लक्ष्मी नारायण लाल—हिन्दी कहानियों की शिल्प-विधि का विकास

(५) प्रो० केसरी कुमार—हिन्दी के कहानीकार

(६) श्री छबिनाथ त्रिपाठी—कहानी कला और उसका विकास

(७) श्री शिवनन्दन प्रसाद एम० ए०—कहानी के तत्व

(८) प्रो० वासुदेव एम० ए०—हिन्दी कहानी और कहानीकार

(८) श्री मोहनलाल जिज्ञासु—कहानी और कहानीकार

(९) श्री विनोद शङ्कर व्यास—कहानी-कला

(१०) श्री गिरधारी लाल शर्मा गर्ग—कहानी : एक कला

(११) साहित्य सन्देश—जनवरी—फरवरी १९५२

(१२) श्री गुलाब राय—काव्य के रूप

(१३) डा० नगेन्द्र—विचार और अनुभूति

(१४) डा० रामकुमार वर्मा—साहित्य समालोचना

(१५) डा० जगन्नाथ प्रसाद शर्मा—हिन्दी की गद्य-शैली का विकास

(१६) श्री इन्द्रनाथ मदान—प्रेमचन्द : चिन्तन और कला

(१७) श्री विनोदशङ्कर व्यास—प्रसाद का जीवन और साहित्य

(१८) श्री गंगाप्रसाद पाण्डेय—हिन्दी-कथा साहित्य

(१९) श्री श्रीपति शर्मा—कहानी-कला और प्रेमचन्द

(२०) डा० सत्येन्द्र—प्रेमचन्द : कहानी-कला

(२१) Seon O' Faolin—The short story.